सात फेरे

(एक सामाजिक उपन्यास)

चुन्नीलाल 'काविश'

विश्व भारती प्रकाशन
धनवटे चेम्बर्स: नागपुर जबलपुर

सात फेरे

● लेखक : चुन्नीलाल 'काविश' ©

● प्रकाशक : विश्व भारती प्रकाशन
धनवटे चेंबर्स, नागपुर–जबलपुर

● मुद्रक : चन्दन प्रेस, कीटगञ्ज
पीलीकोठी, इलाहाबाद—२

मूल्य : ४.००

मुझे श्री चुन्नीलाल काविश के लघु उपन्यास "सात फेरे" देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। जो लोग उपन्यास साहित्य में संश्लिष्ट समस्यायें खोजते हैं उनके लिये यह रचना सम्भवतः अपेक्षाकृत अधिक सुगम प्रतीत हो। लेकिन, समाज में यदि व्यक्ति और व्यक्तित्व के मध्य कायम रहने वाले रिश्तों का कोई महत्व है, और व्यक्तिगत जीवन में आने वाली कठिनाइयों को पार करते हुए इन रिश्तों को निभाना कर्तव्यपरता है, तो सात फेरे एक प्रवहमान छोटे से चश्मे के रूप में देखी जा सकती है, जिसमें गोरी और सोफ़िया जैसी स्त्रियाँ अपने धर्म पर अविचल रहकर उज्ज्वल आदर्श उपस्थित करती हैं। साथ ही इस रचना को एण्टी हीरो की संज्ञा भी दी जा सकती है, क्योंकि उपन्यास का नायक यशपाल सामाजिक बन्धनों को तोड़ कर अपने मनचीते मार्ग पर चलता हुआ दुर्घर्ष कठिनाइयों से पार न पाने की स्थिति में टूट जाता है और अपराधी जीवन को स्वीकार कर लेता है।

इस उपन्यास के चरित्र-नायक के रूप में यदि यशपाल को प्रस्तुत करते समय श्री काविश ने यदि सामान्य रोमानी कथा साहित्य का एक प्रचलित आदर्श उपस्थित किया है, तो भी सामान्य पाठक के लिए वह सहज ही स्वीकार होगा। साहित्य का सबसे बड़ा धर्म रागात्मक भाव की निष्पत्ति करना है। काविश जी के सभी चरित्रों

में एक अनोखी मासूमियत है जिन पर सामाजिक घात-प्रतिघात का सीधा प्रभाव पड़ता है और एक नये जीवन-वास्तव को सहज रूप में पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करता है। यदि यह रचना किसी प्रयोगवादी लेखक [द्वारा प्रणीत होती, तो चर्चा का विषय बन सकती थी। केवल एक ही दिशा की ओर संकेत करना बाकी था कि गोरी, यशपाल के साथ फिरने वाले छः फेरों को प्रतिष्ठित न करके सातवें फेरे के बहाने नये समाज की प्रगतिशीलता को अंगीकार कर लेती, तथा किसी बेहतर तरीके से जीने वाले खुशहाल आदमी के साथ बैठ जाती। फिर सातवाँ फेरा फिरता या न फिरता।

महावीर अधिकारी

सम्पादक—नवभारत टाइम्स बम्बई

"गोरी का मुकदमा"

यह कहानी लिखी थी १९५६ में—नाम था गोरी। कहानी लिख कर सबसे पहले जिसे सुनाई वह थे श्री बृहस्पत देव वेदी, फ़िल्म डायरेक्टर। कभी फ़िल्मी दुनिया में उनका बड़ा नाम था। सूर्य उदय के साथ ही उनके घर पर चित्र वालों का ताँता लग जाता और फिर साँझ की बेला सभा सजती। अगर उस सभा को महफ़िल कहा जाय तो ग़लत न होगा। और वह महफ़िल उठती थी प्रभात के समय। कुछ मित्र तो ऊँघते-ऊँघते घर चले जाते और कुछ वहीं ड्राइंग रूम में पड़ रहते। मैंने उनकी महफ़िलें तो नहीं देखीं क्योंकि १९४७ से पहले उनकी यह महफ़िलें लुट चुकी थीं, केवल महफ़िल के कुछ टूटे साज़ बच गये थे, और वह भी एक ही करवट में गीत अधूरे छोड़ कर देश के विभाजन के साथ बँट गये। मैं जब बम्बई आया तो उनके दम-खम टूट चुके थे।

कहानी सुनकर उनमें एक उत्साह उत्पन्न हुआ, उनमें आचरण-हीनता आ चुकी थी। इस कहानी ने उनमें जागृति पैदा कर दी। उन्होंने भागना शुरू किया। तीन साल तक वह भागते रहे। उन्हें एक ऐसा प्रोड्यूसर चाहिए था जो इस गोरी को किसी तरह चित्रपट तक ले जाये। क्योंकि वेदी साहब को आशा ही नहीं विश्वास था कि इस गोरी को देखते ही जनता मोहित हो जायगी और उनकी लुटी हुई महफ़िलें फिर सजने लगेंगी।

उनका परिश्रम सफल हुआ। एक फ़िल्मी पत्रकार (जिनका नाम नहीं बताऊँगा, क्योंकि अब वह विचारे भगवान के घर चले गये हैं)

जिन्होंने अपना नया-नया दफ्तर खोला था, यह कहानी सुनकर उछल पड़े और नेदी साहब मुझे लेकर गये। मैंने फिर कहानी को ब्यौरे से कहना शुरू किया। वह पत्रकार थे, इस कारण कहानी की उन्होंने खूब-खूब प्रशंसा की। पर रुपये-पैसे की बात आरम्भ होते ही उनका मुख मलीन हो गया। और अन्त में यह कहा कि आप हफ्ते भर के बाद मिलिये तो फ़ैसला करते हैं।

हफ़्ते भर के बाद वहाँ जुगल किशोर नाम के एक नये डायरेक्टर बैठे थे इसलिए मुझे फिर कहानी सुनानी पड़ी। और बात फिर एक हफ्ते के लिए और टल गई।

दो हफ़्ते के उपरान्त पता चला कि हमारी कहानी उन्होंने बनानी शुरू कर दी है लेकिन ······। अर्थात् गोरी पसन्द थी किन्तु लेखक पैसे माँगता है इसलिए लेखक को नापसन्द कर दिया। यह समाचार पाते ही मुझे ऐसा जान पड़ा जैसे किसी ने मेरा बच्चा चुरा लिया हो।

अगर कोई बच्चा उठाकर ले जाता तो मैं पुलिस में रिपोर्ट लिखवाता और पुलिस तलाश शुरू कर देती। या कोई माल चोरी हो जाता तो भी सरकार के सन्तरी कार्रवाई करते। मगर यह तो कहानी थी, वह भी सुनी हुई। कहानी का आकार जो मन पर अपनी छाप डालता है आँखों से दिखाई तो देता नहीं उसके लिए पुलिस क्या करे। इस आधुनिक युग में जिस प्रकार नित अनोखी बीमारियाँ निकल रही हैं वैसे ही नित नई चोरियाँ भी निकल रही हैं। और फ़िल्मी दुनिया तो और भी विचित्र है। नज़र बची कि माल यारों का।

यहाँ जो कलाकार आपको चित्रपट पर दिखाई देते हैं उनका दाम मुँहमाँगा है—और वह भी अँधेरे-उजाले के दो भाव हैं। फ़िल्म का सारा धन्धा ही अँधेरे का है। अँधेरे में बनती है, अँधेरे में डेवलप होती है, अँधेरे में दिखाई जाती है। रोशनी तो केवल स्टार पर

रहती है। इसलिए बाकी अँधेरे में चलते-फिरते लोग लेखक से लेकर लाइटमैन और कुली तक पर किसी की नज़र नहीं पड़ती। और नज़र न पड़ने के कारण उनको कोई पूछता ही नहीं। लेखक की बात और भी विचित्र है कि वह कहानी सुनाये; नहीं तो बिकती नहीं और सुनाये तो बचती नहीं—चोरी हो जाती है।

फ़िल्म निर्माता रोते हुए कहते हैं—हम क्या करें बड़े स्टार इतना खा जाते हैं कि किसी के लिए कुछ बचता नहीं। मैं कहता हूँ—फ़िल्मी दुनिया एक कुनबा है, एक घर है—घर में एक दो खिलण्डरे निकल आते हैं, रसोई घर से सारा दूध पी जाते हैं, सब सामग्री निगल जाते हैं, दूसरे भाई भूखे मरने लगते हैं—तो क्या करेंगे घर के बड़े-बूढ़े ? उत्तर सीधा है—उनको निकाल बाहर करेंगे। मगर आप इनको इसलिए निकाल बाहर नहीं कर सकते कि आपके मन में भी यही विचार है कि यदि हम मौक़ा पा जायें तो रसोई घर का सारा माल हम ही हड़प कर जायें। तो भाई जैसी बड़े-बूढ़ों की नियत होगी खिलण्डरे घर में पैदा हो जायेंगे। मैं पूछता हूँ यदि "आज तुम सब निर्माता मिल कर यह तै कर दो कि हम देश का टैक्स चुराने वाले अर्थात् ब्लैक रुपया लेने वालों के साथ कोई कारोबार नहीं करेंगे तो क्या यह इण्डस्ट्री सुधर नहीं सकती ? मगर भाई आप तो खुद यह चाहते हैं कि सरकार को टैक्स न दें और चोरी का रुपया अन्दर भर लें।

हम फ़िल्मों में कोई न कोई उपदेश की बात रखते ही हैं किन्तु हमारे उपदेश का जनता पर उलटा प्रभाव पड़ता है क्योंकि हम आचरण-हीन हैं। इन बिचारे स्टारों का क्या दोष है ? यह तो केवल नाट्य के सिवा कुछ और जानते ही नहीं। लेखक जिसका काम विचार करना और उपदेश देना है, उसको भी यदि अवसर मिल जाय तो वह भी वही करे। और लेखक-गण ऐसा करते भी हैं। आखिर वह भी आदमी हैं। दरअसल जिस वातावरण में हम जी रहे हैं वह वातावरण ही

स्वार्थी हो रहा है। तो लेखक भी वैसा ही हो रहा है। मैं केवल उनसे एक प्रश्न किया करता हूँ कि भाई यदि रुपया कमाना ही उद्देश्य है तो लेखक होना जरूरी नहीं आजकल तो बीसियों काम हैं। दौड़-भाग करके सरकार से एक लाइसेन्स ही ले लो, वारे-न्यारे हो जायेंगे। यही प्रश्न अपने आप से भी कर लेता हूँ इसीलिए अभी तक इस आरोप से बचा हुआ हूँ। कल का कुछ कह नहीं सकता! साँस का भरोसा नहीं तो आदमी का भरोसा क्या होगा? और फिर मैं भी तो उस वातावरण में साँस लेता हूँ—संग-दोष विवश तो शास्त्र-सम्मत है ही।

मैं यह सब बातें इसलिए बता रहा हूँ कि पाठकों को गोरी के मुक़दमे की पूरी बात समझ में आ जाय, यह ज़रूरी है। क्योंकि एक आदमी ने रोटी चुराई, उसका मुक़दमा चला, तो अदालत को यह भी सोचना चाहिए कि उसने रोटी किन हालातों में चुराई, उसकी परिस्थितियाँ क्या थीं? भूखा था इसलिए चोरी की या चोरी की साधना कर रहा था या खानदान ही चोरों का था।

तो जिसने गोरी चुराई वह भी उसी खानदान (फ़िल्म इण्डस्ट्री) का एक प्राणी था, जिसका मैं भी एक व्यक्ति हूँ। तो यह न तो साधना की बात है, न परिस्थिति की बल्कि······

समाचार पाते ही मैं महालक्ष्मी पहुँचा। महालक्ष्मी के मन्दिर नहीं, महालक्ष्मी स्टेशन के पास ही एक फ़िल्मी मन्दिर है—फ़ेमस सिने लेबोरेट्री। वहीं तीसरी मञ्जिल पर प्रोड्यूसर का दफ्तर था।

मेरे मुख पर क्रोध के भाव थे। यह मेरा स्वभाव है कि मैं मन की बात छुपा नहीं सकता। और मेरा मुख सदा मेरे मन का दर्पण बना रहता है।

वे मेरे क्रोधित आकार से प्रभावित नहीं हुए।

मैंने प्रश्न किया—"सुना है आपने गोरी को फ़िल्माना आरम्भ कर दिया?"

"जी हाँ।"

"क्यों ? बिना अधिकार खरीदे।"

"खरीद लेंगे।"

"कब ?"

"एक दो दिन में।"

"आपको मालूम नहीं कि मैं केवल कहानी नहीं लिखता, स्क्रीन प्ले और डॉयलाग भी लिखता हूँ।"

"उसके लिए तो हमने आदमी रख लिया है।"

"कौन है वह ?"

"आपके कोई लेखक भाई हैं।"

"लेकिन यह तो चोरी है।"

इस बात पर उनके दोस्त और वह स्वयं ठहाका मार कर हँस पड़े। फिर एक दूसरे को उन्होंने देखा। और मुझे ऐसा जान पड़ा जैसे वह एक दूसरे की ओर देखकर यह कह रहे हों, देखो कितना बुद्धू है। हमें चोरी और साहूकारी का अन्तर बता रहा है। मैं उनके भाव को समझ कर बोला—"यह तो सीनाज़ोरी भी है।"

यह सुनकर उन्होंने कहा—"आप खामखाह बिगड़ रहे हैं। यह तो फ़िल्म इण्डस्ट्री में हमेशा होता चला आया है। हमें सब्जेक्ट पसन्द था—आपकी कीमत नापसन्द थी। क्या करते ?"

"अजी तो आप क्या चोरी कर लेंगे ?"

"देखिये आप क्रोधित होकर अपना कुछ नुकसान करेंगे, हमारा नहीं। बेहतर है कि आइये कोई मामला सुलझाने की बात करें। और इस झगड़े को यहीं समाप्त कर दें।"

मेरे कान लाल हो गये और मन में ऐसी ग्लानि भर गई कि बता नहीं सकता। पर करता क्या? मैंने कहा—"बताइये—आप क्या चाहते हैं?"

"जो कहानी सुनाई है उसके दाम तै कर लीजिये।"

"आप क्या देते हैं?"

थोड़ी देर कमरे में सन्नाटा रहा। प्रोड्यूसर के मित्र ने सिगरेट सुलगाया, प्रोड्यूसर अपने कागज उलते-पलटते रहे, कमरे में सरसराहट शुरू हुई। चपरासी ने चाय का कप लाकर मेज़ पर रख दिया। मैंने 'नो, थैंक्स' कहकर कप दूसरी ओर सरका दिया। और फिर प्रोड्यूसर ने वही कप उठा लिया और चाय की चुस्की लेते हुए बोला—"एक हजार।"

"एक हज़ार।" मुझे ऐसा लगा जैसे किसी ने चाँटा मार दिया हो।

मेरी परिस्थिति उन दिनों अच्छी नहीं थी। पनौती का पहला अढ़ैया आरम्भ हो चुका था और शनि महाराज ऋण, रोग, वैर के भाव में विराजमान होकर पूर्ण दृष्टि से धन-स्थान को देख रहे थे। मेरे स्वार्थ ने कहा—'हज़ार रुपये तो आ रहे हैं ले लो–झगड़े में यह भी मिलेंगे या नहीं, मैंने दायाँ हाथ फैला कर कहा—

"लाइये।"

इस बात पर दोनों पार्टनर चित्त थे। उन्होंने आँखों में एक दूसरे को देखा और कहा—

"आज पन्द्रह तारीख है। आप ठीक अगली पन्द्रह तारीख को आकर ले जाइये।"

उनकी बात सुनकर अब मैं चित्त हो गया। दाम भी नहीं मिला और भाव भी ओछा हो गया। क्या करता? लौट आया।

मैं फिर इस गोरी के गम में कई रातें नहीं सोया। रात को जब मैं सो जाता तो गोरी झंझोड़ कर जगा देती। मैं हड़बड़ा कर जागता तो वह कहती—

"जानते हो वे मेरे साथ क्या सुलूक़ करेंगे ?"

मैं पूछता—"क्या ?"

तो वह कहती—"जानते नहीं। ये भिखारी जो बच्चों को उठा ले जाते हैं क्या करते हैं।"

"क्या करते हैं ?"

"वह इन बच्चों के रूप बदल देते हैं ताकि बच्चों को उनके माँ-बाप पहचान न सकें।"

मैं कांप जाता, क्योंकि बच्चों का अगवा करने वाले यही करते हैं। किसी की आंखें निकाल दीं, किसी का बाजू काट दिया, किसी की नाक कतर ली, किसी के शरीर को कोढ़ से पाट दिया। ऐसा करने में उनके दो लक्ष्य होते हैं—एक यह कि बच्चों के माँ-बाप उनको पहचान न सकें और दूसरे यह कि देखने वालों को उन बच्चों पर तरस आ जाय।

सो अगर उन्होंने गोरी को कुरूप कर दिया तो क्या होगा ?

महीना भर मैं बेचैन रहा। एक महीने के बाद ठीक पन्द्रह तारीख को उनके दफ़्तर में गया। दिल में यह ख्याल था कि आज किसी तरह तै कर लूंगा। कम से कम गोरी कुरूप होने से तो बच जायगी।

आज उन्होंने हंस कर स्वागत नहीं किया। बल्कि ज़रा माथे पर बल डाल कर कहा—

"फ़रमाइये ?"

"जी आज वह पन्द्रह तारीख है।" मैंने यों डरते-डरते कहा जैसे उधार मांग रहा था।

"लेकिन इन्तज़ाम नहीं हो मका।"

"आपने तो आज का वादा किया था।"

"जी गलती की थी।"

और उन्होंने हाथ जोड़ दिये। भाव यह था कि जाइये, कर लीजिये जो आपसे हो सके।

मैं उनके दफ्तर से निकल कर फ़िल्म राइटर्स ऐसोसियेशन के दफ्तर में आ बैठा। जनरल सेक्रेट्री के नाम दरख्वास्त लिखी और राइटर्स ऐसोसियेशन में गोरी का मुक़दमा चलना शुरू हुआ।

जो लेखक फ़िल्म लिख रहे थे उन्होंने कहा कि मुझे कहानी प्रोड्यूसर ने सुनाई है, मैं नहीं जानता किसकी है। प्रोड्यूसर ऐसोसियेशन के दफ्तर में आते नहीं थे। जिस तरह अदालत में कुछ लोग पेशी के दिन डाक्टर का सर्टीफ़िकेट पेश कर देते हैं उसी तरह यह प्रोड्यूसर कोई न कोई सन्देशा भेज देते थे। अन्त में राइटर्स ऐसोसियेशन ने फ़ैसला किया कि प्रोड्यूसर की राह नहीं देखनी चाहिए बल्कि जो लेखक अब लिख रहा है उससे कहानी सुनकर फ़ैसला कर देना चाहिए। लीजिये एक कमेटी बन गई और उसके अध्यक्ष थे श्री पंडित सुदर्शन जी।

पण्डित जी के घर पर सभा बैठी। मुझसे कहानी सुनाने को कहा गया। और मैंने गोरी की कहानी सुनाई। कहानी सुनकर वह लेखक बड़े प्रभावित हुए और कहने लगे कि यह जो काविश साहब ने कहानी सुनाई है इसमें तो एक अजीब बात है और विचित्र रस है। और प्रोड्यूसर ने जो सुनाई थी वह 'हलाल' करके सुना दी थी, मैं तो उसी कहानी को ठीक कर रहा था।

और इसके बाद उन लेखक महाशय ने बड़े विनय से कहा—"मैं माफ़ी चाहता हूँ हुज़ूर। मुझे तो मालूम ही नहीं था कि आप इतनी अच्छी कहानी लिखते हैं। मैं ऐसोसियेशन को यक़ीन दिलाता हूँ कि

मैं इस कहानी को नहीं लिखूंगा। इसके साथ कोई सीन, कोई सीक्वेन्स नहीं मिलेगा। गोया एक नई कहानी होगी।"

मैं इस प्रशंसा पर मुग्ध हो गया।

उन लेखक महाशय की कही हुई बात ऐसोसियेशन ने काग़ज पर लिखवाकर अपने पास रख ली।

पर वह फ़िल्म कुछ दिनों के बाद किसी कारण से बनते-बनते बन्द हो गई और बेकसूर प्रोड्यूसर विचारा इस झूठी इण्डस्ट्री को क्या इस झूठी दुनिया को ही छोड़कर सच्चे घर चला गया।

मैंने इस कहानी को फिर 'गोरी' नाम की पत्रिका में छपवाना शुरू किया। वहां यह धारावाहिक उपन्यास के रूप में छपी।

और अब "सात फेरे" के नाम से आपके हाथ में है। यह उस गोरी के सात फेरे हैं जो आपके पास अपने असली रूप में आ रही है—सज-धज कर नहीं, सीधे सहज भाव से क्योंकि सरलता ही गोरी का गुण होता है।

किस्मत।
४, पैरी क्रास रोड,
बम्बई—५०। —सी० एल० काविश

सात फेरे

१

दादर की पुरानी बिल्डिंग के लोग धीरे-धीरे उस फ्लेट में इकट्ठे होने लगे जहां आज गोरी के फेरे पड़ने वाले थे। चारों ओर गोरी के चाचा की सराहना हो रही थी।

"भाई ! चाचा हो तो ऐसा हो। गऊदान करना तो सहल है किन्तु दुधारू गाय की रस्सी तो स्वयं भगवान विष्णु के हाथ देने में भी आदमी संकोच कर जाता है किन्तु इस तीरथराम चोपड़ा को देखो अपनी जवान भतीजी की नौकरी छुड़वा कर उसकी शादी कर रहा है। नहीं तो आज कल के लोग कमाने वाली सगी बेटियों को शादी तीस-तीस बरस तक नहीं करते।"

और जब गली में बैन्ड बाजा बजने लगा तो लोग अपनी प्रशंसा की पोटलियां झाड़ते हुए जीने की ओर भागे। "बारात आ गई...... बारात आ गई.........।"

पुरुष बारात की अगवानी के लिए बढ़ रहे थे और कुमारियां दूल्हा के दर्शन करने के लिए, जिनके पृष्ठ पर उन्हें अपने भविष्य का सुनहरा सपना दृष्टिगोचर होने वाला था। उधर जिस गोरी का सपना आज मूर्तिमान होकर द्वार पर उसके चाचा से कन्यादान लेने आया था उसे, उसकी सहेलियां सजा रही थीं। शायद गीत भी गा रही थीं।

इतने में गोरी की चाची ने कमरे में प्रवेश किया।

"हाय शृंगार खतम भी कर चुकीं बारात तो आ भी गई !"

इतना कह कर चाची तो जल्दी-जल्दी बाहर चली गईं और उसके चाचा की बेटी सुमित्रा ने उसका मुँह चूमकर कहा, "मेरी हीरोइन को देखकर हीरो फेन्ट हो जायगा।"

गोरी दर्पण के सामने खड़ी थी। उसने दर्पण में अपनी मूर्ति देखीं और लजाकर आँचल में अपना मुँह छिपा लिया।

बारात विचित्र थी। कुछ बैंक के क्लर्क। दूल्हा जिस गेस्ट हाउस में रहता था उसकी मालकिन मैंडम सोफिया नया फ्राक पहने अपने दोहरे बदन को संभालती और इठलाती हुई दूल्हा के साथ-साथ आ रही थी। लगता था जैसे यह विवाह उसके किसी निकट स्नेही का है। शंकर दादा आज अपनी धोती उतार सूट पहन कर आया था। उसके गले में टाई भी लटक रही थी। सोफिया के कुछ दूर के नातेदार भी साथ थे और गेस्ट हाउस के पास बसने वाले ईसाई नौजवान तो बारात के आगे-आगे रॉक एन्ड रॉल की ध्वनि पर ईसाई छोकरियों के साथ नाच रहे थे।

जब दूल्हा ने फ्लेट में प्रवेश किया तो चाची ने अपने आँसू पोंछते हुए चौखट पर तेल टपकाया। नरियल फोड़ा। दूल्हा के सिर पर से रुपये पैसे वार कर गली में फेंक दिये और फिर चाचा ने सबको प्यार के साथ ड्रांइग रूम में बिठा दिया।

पंडित हवन की सामग्री लिये बैठे थे। मुहूर्त का समय न टल जाय चाची को इस बात की जल्दी थी। चाची ने अन्दर जाकर गोरी को अनमने दिल से गले लगाया, और फिर उसे संभाल कर वेदी पर ला बिठाया।

विवाह के श्लोक पढ़े जाने लगे। आग प्रज्जवलित हुई। दोनों का गठ-बंधन हुआ। अग्नि को साक्षी बनाकर के अग्निकी परिक्रमा करने लगे।

समाज और धर्म भारतीय संस्कृति के अनुसार वर और कन्या को सात अदृष्य किन्तु अटूट बधनों में बांधता है। द्वंत अद्वंत हो जाता है। शरीर दो होते हैं किन्तु मन एक हो जाता है। गोरी और यशपाल के मन तो कभी के एक हो चुके थे। अब धर्म और संस्कृति शरीर एक कर देने का प्रयत्न कर रहे थे।

पहला फेरा हुआ। एक अटूट बन्धन...... ! यशपाल को ऐसा प्रतीत हुआ मानों गोरी जो कल तक उससे सात मंजिल दूर थी वह अब करीब आ गई है।

दूसरा फेरा हुआ। गोरी के तृषित मन को ऐसा लगा जैसे उसकी कामना की गंगा उससे केवल छः कदम दूर है और अब उसके प्यासे होठों की तृष्णा थोड़ी देर में बुझ जायगी।

जब पंडित ने छठा फेरा गिना और सातवां फेरा प्रारम्भ हुआ तो एक आदमी भागता-भागता आया और उसने यशपाल के कान में कुछ कहा।

यशपाल स्तब्ध हो गया। उसके चरण अवरुद्ध हो गये और वह भौंचक्का सा चारों ओर यों देखने लगा जैसे हिरनी के साथ किलोल करते हुए हिरन ने किसी शिकारी को देख लिया हो। गोरी चकित हो गई। लोग हैरान रह गये कि यह प्रेम विवाह में बंधने वाला युगल इस तरह निश्चल और चकित सा क्यों खड़ा रह गया।

यशपाल दूसरे ही क्षण भीतर की ओर भागा और गोरी के सिर का आंचल धरती पर घिसटता हुआ उसके पीछे चला गया।

गोरी व्यग्र सी अस्त-व्यस्त, सोलह शृङ्गार में सजी हुई बिना घूंघट के वहां खड़ी की खड़ी रह गई।

पुलिस दनदनाते हुए फ्लेट के दरवाजे तक आ पहुँची। उसके पास यशपाल का वारन्ट था। पुलिस ने फ्लेट के अन्दर घुसकर चारों तरफ यशपाल को ढूंढना शुरू किया।

गोरी सोचने लगी कि मैंने किस हत्यारे के चरणों में अपना मन अर्पण कर दिया। वह स्तब्ध हो गई, निश्चल पाषाणवत्। उसकी आंखों में एक भी अश्रु नहीं था। उसके मुँह पर लेश मात्र भी विकार नहीं था। वह निर्लेप सी खड़ी थी। यकायक उसके सुहाग के कंगन क्रंदन कर उठे और दोनों हाथों से उसने अपना मुँह छिपा लिया।

क्या वह एक अपराधी की पत्नी बनने वाली थी ? भगवान ने उसे बचा लिया। क्या किसी हत्यारे ने जान-बूझ कर गोरी के सुखों की फुलवारी में चिनगारी डाल दी थी।

●

२

●

जीवन एक परीक्षा है। यहां कदम-क़दम पर प्राणी मात्र की परीक्षा होती है। गोरी जब पहली बार यशपाल से मिली थी वह भी एक परीक्षा की घड़ी थी।

उस दिन दादर स्टेशन पर जब लोकल ट्रेन ने भोंपू बजाया तो गोरी पुल की आखिरी सीढ़ी पर थी। वह भोंपू सुनकर भागी। बम्बई की जिन्दगी में भागी-भागी बहुत रहती है। फ्लेटफार्म से गाड़ी को निकलते इतनी देर भी नहीं लगती जितनी आजकल के नौजवानों के हाथों से दिल निकलते हैं।

गाड़ी प्लेटफार्म को छोड़ने ही वाली थी कि गोरी फर्स्ट क्लास के डिब्बे के साथ भागने लगी।

उसकी साड़ी का आँचल हवा में लहराने लगा। कम्पार्टमेन्ट का हैन्डिल उसके हाथ में आ गया, मगर गाड़ी प्लेटफार्म से गुजर कर ढलवान तक पहुच गई थी। अब उसके पांव जमीन पर न थे। वह गाड़ी के डिब्बे के साथ लटक गई थी। उसके चेहरे की लाली सफेद साड़ी के रंग से मिल गई। मौत से पहले जो मुरदनी छा जाती है वही गोरी के मुख पर अपना प्रभाव डालने लगी मानों वह गाड़ी को पकड़

रही हो और यमराज उसकी आत्मा को पकड़ने का यत्न कर रहा हो।

गाड़ी में शोर मचा—"मर गई ! मर गई !"

लोग खिड़कियों से उचक-उचक कर झाँकने लगे, लेकिन कोई आदमी अपनी सीट से उठने को तैयार न था क्योंकि सीट के घिर जाने का डर रहता है।

द्वार के आगे जो खड़े थे उन में भी खलबली मच गई। एक नौजवान ने आगे बढ़कर गोरी का हाथ पकड़ा और उसे अन्दर खींचने लगा। वह यशपाल था। लेकिन गोरी के पांव दरवाजे की तरफ खिसक गये क्योंकि गोरी गाड़ी की तेज रफ्तार और वायु के आवेग से अति बोझिल हो गई थी। यशपाल ने अपने-आपको सम्भालने की कोशिश की। उसका एक हाथ दरवाजे के हैन्डिल को पकड़ने में सफल हो गया। उसने गोरी को पूरी शक्ति से अन्दर की ओर खीच लिया। गोरीडिब्बें में आ गई, चूँकि वह मौत के मुँह से बची थी इसलिए थोड़ी देर तक उसकी आँखों के सामने अंधेरा सा छागया। गाड़ी में बैठे हुए आदमी तारों की तरह उसके सामने घूमते रहे और और कानों में कई प्रकार की आवाजें 'सांयं-सांयं' के साथ गूंजती रहीं।

गाड़ी 'फास्ट' थी। रास्ते में उसने कई स्टेशन साधारण समझकर पीछे छोड़ दिये। दूसरे-तीसरे स्टेशन तक पहुँचते-पहुँचते गोरी की आँखों का अंधेरा दूर हुआ। उसके चेहरे की रंगत धीरे धीरे अपने असली रंग पर आने लगी। कानों का शोर भी लुप्त हो गया और लोगों की आवाजें भी साफ हो गईं।

कोई कह रहा था—"बम्बई में लोग जान बूझकर मौत को बुलाते हैं।"

दूसरा बोला—"साला लोग, एकदम नहीं समझता।"

एक बूढ़ा आदमी गोरी की तरफ देखकर कहने लगा—"देखो ना, कितनी अच्छी लड़की है। अभी मर जाता।" फिर उसने अपनी सीट पर बैठे ही बैठे लड़की से कहा—"तुम इतना जल्दी किधर जाता है? क्या ऐरोप्लेन पर जाता है? भागती गाड़ी को पकड़ता है? आज इस बाबू ने बचाया, कल कौन बचायेगा?"

यशपाल ने, जिसने बचाया था—बूढ़े की तरफ देखकर कहा—"सच है! भला कोई पूछे, दो मिनट में क्या पहाड़ टूट पड़ता, जरा-सी देर ही हो जाती ना।"

गोरी ने जो दरवाजे के साथ वाली सीट का सहारा लिये सर झुकाये खड़ी थी, नज़र उठाकर यशपाल की तरफ देखा और यशपाल ने भी उसे देखा। गोरी की दृष्टि में जो वेदना भरी थी उसे देखकर यशपाल सहम गया। गोरी की नजरें जैसे उससे कह रही थीं—"तुमने तो मेरी जिन्दगी बचाई है। मैं तो तुम्हें भला आदमी समझती थी, पर तुम भी इन जैसे ही हो जो लड़कियों को देखकर या तो मजाक करते हैं या वासना-भरी दृष्टि से देखते हैं या फिर बुजुर्ग व संत बन कर उपदेश देते हैं, ये सब बातें उसकी एक नजर ने कह दीं लेकिन यशपाल आज-कल का नौजवान था। आज-कल के नौजवान गहराई की बात नहीं जानते, मन के भाव को नहीं समझते, केवल बात का ऊपरी अर्थ समझकर अनर्थ कर डालते हैं। किन्तु भाव में जो शक्ति है वह दृष्टि से इस प्रकार प्रकट हो जाती है जैसे सूर्य की किरण अन्धेरे में।

यशपाल सहमी हुई गोरी के मन की बात को तो न समझ सका, किन्तु इतना उसकी समझ में जरूर आ गया कि उससे कोई भूल हो गई है। उसने जो उपदेश का फूल मारा है उससे कोई बुरी तरह जख्मी हुआ है।

यशपाल ने बात बनाते हुए कहा—"सॉरी...आई मीन टु से...... यानी कि ये लोग ठीक कह रहे हैं।"

गोरी ने फिर एक बार उसकी तरफ नजर उठाकर देखा। उसकी नीली-नीली आँखें कुछ भीगी-सी नजर आने लगीं। पलकें भी बोझिल हो गई थीं। गोरी ने चलती गाड़ी से बाहर देखा। बम्बई-सेंट्रल के पास की बड़ी-बड़ी बिल्डिगें उसकी आँखों से धुन्धली हो रही थीं और बिल्डिगें गाड़ी के पीछे हटती जा रही थीं। उसने ऊपर की ओर देखा। नीला आकाश थोड़ी दूर तक नजर आता रहा। बिल्डिगों ने उसे भी छिपा लिया।

लोग अभी तक उसकी ही बातें कर रहे थे। उस लड़की के मरने की। उन्होंने ऐसे लोगों की कई कहानियाँ एक-दूसरे को सुना दीं जो गाड़ी पकड़ते हुये कट गए थे।

अब गोरी अत्यंत दुःखी हो गई। उसका धीरज छूट गया। उसने उपदेश के मोती बरसाने वाले बूढ़े की ओर देखा और कहा—"आप अगर हमदर्दी नहीं कर सकते तो नसीहत क्यों करते हैं ?"

गाड़ी में बैठे दूसरे रंगीन-मिजाज नौजवानों ने हाँ-में-हाँ मिलाई— "यह बात तो सोलह आने सच्ची है। जो आदमी मौत के मुँह से निकल कर आया हो, उसके साथ तो हमदर्दी करनी चाहिये, न कि उसे डाँटना-फटकारना चाहिये। सब की अकल मारी गई है।"

गोरी ने उन नौजवानों की तरफ क्रोध से देखा।

उन्हीं में से एक दूसरा चारु-चौबन्ध नौजवान बोला—"और आप सब भी क्या हाँ-में-हाँ मिला रहे हैं ? आप भी खूब ऐटीकेट जानते हैं। जो लड़की मौत के मुँह से निकल कर आई हो वह खड़ी रहे। आप उसे नसीहत तो दे रहे हैं, सीट नहीं देते। आइये मैडम! तशरीफ़ रखिये।" इतना कहकर वह चुस्त नौजवान उठ खड़ा हुआ।

गोरी ने यशपाल की तरफ देखा। वह भी गोरी की ओर ही देख रहा था। उसे यह सीट आफर करने की बात अच्छी न लगी। वह वास्तव में यह चाहता था कि काश, वह कोई रेलवे अफसर होता, तो गोरी के लिए पूरी सीट खाली करवा देता. फिर गोरी उसपर बैठकर आराम करती और वह उसके सरहाने बैठकर पंखा हिलाता···नहीं, बल्कि स्टेशन के वेटिंग-रूम में उसे बिठाता, कुछ ठंडा-मीठा पिलाता और उसके बाद टैक्सी में उसे उसके घर पहुँचा देता·····किन्तु अब तो उसे बैठने को भी सीट ऑफ़र नहीं कर सकता क्योंकि वह खुद खड़ा है।

गोरी उसके ठीक सामने खड़ी थी। उसने सीट ऑफर करने वाले "नो, थैंक्स" कहकर मुँह फेर लिया। लेकिन वह नौजवान काफी ढीठ था। उसने अपना कालर ठीक किया और कहा—"अजी तकल्लुफ मत कीजिये, बैठ जाइये। आपको आराम की जरूरत है।"

गोरी ने उसकी तरफ देखा तक नहीं। वह जरा दरवाजे की ओर खिसक गई।

यशपाल खुश हो गया। उसने शायद दिल में समझ लिया था कि, मैं खड़ा हूँ इसीलिये वह भी नहीं बैठेगी।

गाड़ी चर्च-गेट के स्टेशन में प्रवेश कर चुकी थी। लोग

उतरने की तैयारी करने करने लगे। सीटें करीब-करीब सभी खाली हो चुकी थीं।

बूढ़े पारसी ने कहा—"डीकरो शुं कुरबानी करै छे, जोई लेवा।" कालर वाला नौजवान बड़े जोर से हँसा। लेकिन लड़की उतर चुकी थी, उसने हँसी नहीं सुनी। पर यशपाल ने सुन ली और वह घृणा से मुँह फेर कर तेज कदम उठाता हुआ उसी तरफ बढ़ने लगा, जिस तरफ लड़की बढ़ गई थी।

टिकट चेकर के पास पहुँच कर दोनों की आँखें एक बार फिर मिलीं और झुक गईं। दोनों इरोज सिनेमा की तरफ बढ़ने लगे।

कालर वाले नौजवान ने दूसरे साथ के आदमी को कोहनी मारकर कहा—"देखो, साला बचाने के बाद उसका पीछा कर रहा है।"

लड़की ने पलट कर पीछे देखा।

यशपाल रुक गया और पलट कर 'ए' रोड के गेट की तरफ बढ़ने लगा।

लड़की भी पलट गई और अकड़ कर यशपाल के पीछे खट-खट करती चली गई।

कालर वाला नौजवान सर खुजलाने लगा और उसका साथी बड़े जोर से ठहाका मार कर हँस पड़ा।

चर्च-गेट से छूटने वाली दो गाड़ियों का एक साथ भोंपू बज गया दोनों गाड़ियाँ खट-खट करती चलने लगीं।

'ए' रोड के बाहर के० सी० कालेज के सामने की तरफ काफी भीड़ थी। उस भीड़ में यशपाल जाता हुआ नजर आ रहा था लेकिन गोरी उसकी तरफ नहीं गई बल्कि इरोज सिनेमा की ओर बढ़ने लगी।

सड़क पर पहुँच कर उसने ठंडी साँस ली जैसे मुसीबत से छुटकारा पाने के बाद आदमी लेता है।

●

३

●

"नीली बुश्शर्ट वाला साहब,एक रुपया दस आना !"—होटल ब्वाय ने आवाज लगाई ।

नीलीबुश्शर्ट वाले आदमी ने अपनी पतलून की जेब से बटुआ निकालने के लिये हाथ बढ़ाया और एकदम चिल्ला उठा—"मेरा बटुआ ?"

सब लोग उसकी तरफ देखने लगे। ईरानी होटल के मालिक ने कहा—"खीसा पहले देखना मांगता था, पीछू आर्डर देता। यह चार सौ बीसी इदर नहीं चलेगा।"

ग्राहक ने कहा,—"सेठ मैं सच बोलता हूँ, यह देखो मेरी जेब, यहाँ बटुआ था पिछली जेब में। किसी ने निकाल लिया।"

ईरानी ने कहा—"धन्दा खोटी मत करो, पैसा निकालो, नहीं तो बुश्शर्ट उतारो।"

"बुश्शर्ट! मैं उतारूं !" लड़के का रंग फीका पड़ गया।

"हाँ तुम ! नहीं तो अभी पुलिस को बुलायेगा।"

हॉल में बैठे हुए लोग हँसने लगे।

इतने में केबिन का दरवाजा खुला और एक लड़की बाहर निकली

वह खट-खट करती हुई काउन्टर के पास पहुँच गई और एक दस का नोट निकालकर ईरानी सेठ के सामने फेंक कर बोली—"इस नोट से अपने पैसे काट लो, बाकी पैसे वापस कर दो।"

लड़के ने घूमकर देखा वही लड़की थी·-–गोरी जिसे उसने आज मौत के मुंह से बचाया था। यशपाल ने कहा—"जी नहीं, आप रहने दीजिये मैं बुश्शर्ट उतारे देता हूँ। अभी दफ्तर से जाकर पैसे लाता हूँ और इसके हवाले करता हूँ।"

गोरी ने कहा—"इसकी जरूरत नहीं, आप मुझे पैसे लौटा दीजियेगा।"

ईरानी ने गोरी की ओर देखा और मुस्कराने लगा। गोरी ने कहा--"हंसते क्या हो ? पैसे वापस करो।"

देता है मेम साहब ! यह लो आठ रुपये छः आने।" गोरी ने दुअन्नी काउन्टर पर छोड़ दी और बोली—"यह ब्वॉय को टिप दे देना।"

फिर उसने यशपाल की ओर देखकर कहा,--"आपको कहाँ जाना है ? आइये मैं पहुँचा दूँ।"

यशपाल विना सोचे ही उसके पीछे चल पड़ा। दोनों होटल से बाहर निकल आये। बाहर आकर यशपाल ने कहा–"मैं आपका शुक्र-गुजार हूँ, आपने मेरी इज्जत बचा दी।"

गोरी ने उसकी ओर देखकर कहा—"इज्जत नहीं बुश्शर्ट !" और फिर होंठ दबाकर मुस्कराने लगी।

यशपाल ने कहा—"मेरा मतलब भी यही था।"

गोरी ने कहा—"अच्छा, नमस्ते !" और फ्लोरा-फाउण्टेन की ओर बढ़ने लगी।

यशपाल पहले तो भौचक्का ही खड़ा रहा। फिर उसने तेजी से कदम बढ़ा कर पीछा करते हुए कहा—"सुनिये। यह पैसे आपको कहाँ पहुँचा दूं ?"

गोरी ने उसकी तरफ भरपूर निगाहों से देखा और बोली—"इसकी जरूरत नहीं। इन्सान-इन्सान के काम आता है।"

"हाँ, यह तो सच है। आपका नाम क्या है ?"

"गोरी।"

"मुझे यशपाल कहते हैं।"

"मैंने तो नाम नहीं पूछा आपका ?"

"ओ—हाँ।" यशपाल को जैसे कोई भूली हुई बात याद आ गई। फिर बात बनाकर कहने लगा,—मैंने यों ही बता दिया...सॉरी। मैं इस सामने वाले बैंक में काम करता हूँ, और आप ?"

गोरी हंस पड़ी। वह क्षण भर देखती रही फिर बोली—"इन्श्योरेन्स कारपोरेशन में।"

दोनों बातें करते हुए बस स्टाप तक पहुँच चुके थे। क्यू में खड़े लोग बस में बैठ रहे थे। गोरी भी दो कदम लपक कर बस में सवार हो गई। यशपाल बस स्टाप पर एक क्षण के लिए रुका...जब बस आँखों से ओझल हो गई तो। वह अपने बैंक की ओर बढ़ गया।

यशपाल खोया-खोया-सा अपने काम की मेज पर आकर बैठा ही था कि साथी की आवाज पर चौंक पड़ा।

"यशपाल ! यार तुम अपना पर्स यहीं सीट पर ही भूल गये थे ?"

यशपाल ने पर्स उठा लिया और बोला—"यार, अच्छा हुआ। वरना इतनी गहरी मुलाकात न हो सकती।"

"किसके साथ ?" उसके साथी ने पूछा—।

"तुम उसे नहीं जानते।"

"किसे ?"

"जिसने आज मेरे खाने के बिल का पेमेण्ट दिया।"

"कौन था वह ?"

"एक लड़की जिसे आज सुबह मैंने गाड़ी की लपेट में आने से बचाया था।"

"चलो तुम्हारा एहसान उतार गई।"

"नहीं, चढ़ा गई।"

"साहब ! मैनेजर साहब आपको बुलाते हैं।" चपरासी ने आकर यशपाल से कहा।

यशपाल उसी समय उठकर अन्दर चला गया। वह इस बैंक में कोई दो साल से काम कर रहा है। एक लगी-बंधी तनख्वाह उसे हर महीने मिल जाती है। दादर के एक होस्टल में वह रहता है। महीने के बाद जब हिसाब करता है तो दस रुपये से ज्यादा उसके पास नहीं बचते। इस कम तनख्वाह की शिकायत उसने कई बार मैनेजर से की। मैनेजर हमेशा उसकी पीठ थपक देता है और वह उसी तनख्वाह पर राजी हो जाता है।

आज मैनेजर ने बुला कर जब उससे कहा कि तुम्हारी तनख्वाह पच्चीस रुपये बढ़ गई है, तो वह एक दम उछल गया। आज जाने वह किसका मुँह देखकर निकाला था कि हर जगह उसे सफलता ही मिल रही थी। मैनेजर के सामने मारे खुशी के उसका दम फूल गया। भाव का एक आवेश उस पर छा गया। उसकी समझ में यह भी

न आया कि वह किस तरह मैनेजर को धन्यवाद दे। वह केवल "आप ·····आप, थैंक्स।" ही कह सका।

मैनेजर ने कहा—"नहीं, यह तुम्हारा काम है जिसने तुम्हें तरक्की का मौका दिया।"

"जी नहीं। बात यह है कि आज का दिन मेरे लिए बड़ा लकी है।" वह भाव के आवेश में सवेरे की घटना बताने लगा—"वह एक लड़की ·····" और शीघ्र ही वह सँभल गया।

"कौन लड़की ? "मैनेजर ने उसकी तरफ अपनी ऐनक के ऊपर से देखा।

"जी, वह सुबह की बात है। थैंक यू·· थैंक यू सर।"—कहकर बाहर निकलने की तरकीब सोचने लगा कि वह अपने अफसर के सामने क्या कहने चला था, पर पकड़ा गया। मैनेजर उसके भीतर का भाव और बात का ढङ्ग समझ कर कुरेदने लगा—"यह लड़की कौन मिस्टर यशपाल ?"

"जी, वह ···· वह कोई नहीं।"

इतने में चपरासी चेक और एकाउन्ट-बुक लेकर अन्दर आ गया और यशपाल को बाहर निकलने का मौका मिल गया।

अब उसने हिसाब लगाया कि हर महीने पैंतीस रुपये बचेंगे। इन पैंतीस रुपयों से वह कुछ न कुछ करेगा। हफ्ते में एक बार पिक्चर जाया करेगा। अकेले नहीं, किसी दोस्त के साथ। और वह दोस्त कौन होगा ? शायद यही गोरी होगी, जिसके दाहिने गाल पर काला तिल है, जिसकी आँखों की पुतलियाँ नीली हैं और जिसके बाल लम्बे हैं। जिसकी जुल्फों में घूंघर भी हैं, जो ताड़ के समान लम्बी है और हिन्दुस्तानी नर्तकी की तरह सुडौल है। जिसका चेहरा भोला है, जो

भीड़ में शरमा जाती है, लेकिन समय पड़ने पर आकाश की देवी की तरह सहायता करने को प्रकट हो जाती है। जिसके मुख पर हिन्दुस्तानी सभ्यता के अमिट चिन्ह हैं। वही उसके साथ सिनेमा जाया करेगी। रविवार के दिन वह दोनों मिलकर लंच खाया करेंगे अपनी मेज पर बैठे-बैठे वह ख्याली पुलाव पकाता रहा।

× × ×

दूसरे दिन यशपाल सात बजे दादर स्टेशन के प्लेटफार्म नम्बर दो पर जाकर डट गया। उसकी नज़रें पुल पर थीं। पुल पर से उतरने वाली हर लड़की उसे गोरी दिखाई देती थी। आज उसने समय काटने के लिये समाचार-पत्र भी खरीदा लेकिन पत्रिका की एक लाइन भी वह न पढ़ सका। गाड़ियां आती रहीं और जाती रहीं। सात से नौ बज गये किन्तु गोरी पुल से नीचे न उतरी और यशपाल उसकी बाट देखता ही रहा।

सवा नौ बजे के करीब पुल पर से उतरती हुई गोरी उसे नजर आई। यशपाल ने उसे देख लिया। वह जल्दी से बेंच छोड़ कर आगे बढ़ा, पर दूसरे क्षण ही ठिठक कर खड़ा हो गया। गोरी के साथ कोई आदमी था, लम्बा-तड़ङ्गा, आंखों पर काला चश्मा चढ़ाये, बढ़िया सूट पहने। आयु होगी कोई·········आयु का अन्दाजा वह न लगा सका। कभी वह आदमी अधेड़ आयु का दिखाई देता और कभी एक दम जवान। गोरी उसके साथ हँसती हुई सीढ़ियों से नीचे उतर रही थी।

वह आदमी कौन है? गोरी का उससे क्या सम्बन्ध है? कई बातें और शंकाएं यशपाल के मन को अस्त-व्यस्त करने लगीं। उसके सिनेमा-हाउसों का प्रोग्राम और लंच-डिनर की पार्टियां सब बिखरने लगीं।

गोरी ने यशपाल को देख लिया। मगर वह उसकी ओर बढ़ी नहीं केवल होंठों में मुस्कुराई।

यशपाल का चेहरा लाल हो गया चिनार के फूल की भांति। वह वहीं खड़ा रहा। उसके पीछे से एक फास्ट लोकल ट्रेन खट-खट करती गुजर गई और सामने दो नम्बर पर एक गाड़ी शांत भाव से आ खड़ी हुई जिसमें भीड़ कम थी। गोरी लेडीज़-कम्पार्टमेण्ट में घुस गई और उसका साथी मर्दाने में जा बैठा। यशपाल वहीं, प्लेटफार्म पर ही बे-टिकट मुसाफिर की तरह खड़ा का खड़ा रह गया।

गाड़ी चली गई और प्लेटफार्म गंजे के सर की तरह जरा देर में खाली हो गया। यशपाल का मन कई प्रकार की शंकाओं से भर चुका था। उसे गोरी पर-स्त्री जान पड़ने लगी। उसे यह भी ख्याल आया कि जिसके साथ वह आई थी, उस आदमी की गोरी से दूसरी शादी होगी या फिर हो सकता है गोरी के साथ उसका ब्याह न हुआ हो। ब्याह—? किसी अनजानी बात से गोरी उसके लिए काली-सी हो गई। यशपाल के मन में बहुत बुरी-बुरी बातें सर उठाने लगीं।

मनुष्य जब किसी व्यक्ति से कोई आस लगा लेता है और जब उसकी आशा टूटने लगती है तो ऐसी ही विचारधारा बह निकलती है। थोड़ी देर बाद यशपाल ने पत्रिका का एक कोना फाड़ डाला और उसे हवा में उड़ा दिया। ऐसा करने से वह बिना किसी कारण के थोड़ी देर के लिए शांत हो गया। गोरी को उसने दिल से निकाल दिया। वह

मुस्कुराने की कोशिश करने लगा। उसने नफरत से स्टाल पर पहुँच कर एक इकन्नी टी-काउण्टर पर फेंक दी।

"एक चाय।" उसने कहा।

वह इकन्नी काउण्टर के नीचे जा गिरी। टी-स्टाल वाले ने इकन्नी उठाते हुए कहा—"देखकर फेंकना माँगता है साब! एक कप चाय पियेगा पैसा सेठ लेंगा और लफड़ा अपन-तुम, को।"

दूसरे ब्वॉय ने चाय का प्याला लापरवाही से काउण्टर पर सरका दिया—"लो सेठ, चाय।"

प्याला छलक गया—आधा सॉसर में, आधा काउण्टर पर। यशपाल ने गुस्से की नज़रों से उस ब्वॉय को देखा।

"जैसा पैसा, वैसा माल।"—ब्वॉय ने बड़े ठाट से कहा।

यशपाल मुस्करा दिया। उसे याद आया—गोरी ने भी तो मेरे साथ आज ऐसा ही किया है। मैं इसी काबिल हूँ। हर आदमी मेरे साथ यही सुलूक करे······जूते मारे, लातें मारे। उसने चाय का प्याला उठा कर होंठों से लगाया। किन्तु एक घूंट से ही उसका मुंह बेमज़ा हो गया। उसने प्याला रख दिया और भाग कर गाड़ी पकड़ ली।

गाड़ी दादर स्टेशन से बाहर निकल गई मगर यशपाल अपनी वेदना से बाहर न निकल सका।

× × ×

बैंक साढ़े दस बजे खुलता है। स्टाफ दस बजे से पहले पहुँच जाता है। और यशपाल दादर में सबसे पहले आता है मगर जब आज मैनेजर ने उसको पुकारा तो वह अपनी मेज पर नहीं था।

मैनेजर ने ऐनक उतार कर साफ की और चपरासी की बात का विश्वास न करते हुए उसने फिर पूछा—"क्या अभी तक नहीं आया ? जाकर गौर से देखो।"

चपरासी कैण्टीन से लेकर चपरासियों के बैठने की जगह और बैंक के बाहर सड़क तक देख आया, मगर उसे यशपाल न मिला।

मैनेजर क्रोध का घूंट पीकर रह गया। उसने सोचा। 'अजीब नौजवान हैं आज-कल के ? कल तरक्की हुई और आज दफ्तर से गायब।"

"गुड-मर्निंग सर।" यशपाल ने कमरे में घुसते ही कहा।

मैनेजर थोड़ी देर उसे देखता रहा, फिर डांट कर बोला—"उस लड़की के साथ थे अब तक तुम ?"

"जी—जी।"—यशपाल की सिट्टी गुम हो गई—"जी नहीं ! गाड़ी लेट हो गई थी। बात यह थी कि एक आदमी नीचे आकर मर गया अब मैं क्या करता सर ? झूठ नहीं बोलता। आप बेशक फोन करके रेलवे वालों से पूछ लीजिये।" उसने अपनी झूठ को सच साबित करने के लिए रेलवे को गवाह बनाने की बात कर दी।

मैनेजर समझदार था। उसने यशपाल की कलई न खोलने की खातिर फोन को हाथ न लगाया। केवल जरा-सा मुस्कुरा दिया।

असल में यशपाल अजीब सा लड़का है। उसका अन्दाज, बातों का ढङ्ग सब को हंसा देता है और झूठ बोलते हुए वह बहुत नर्वस होता है। अपनी हर झूठी बात पर जोर देता है। पर उसकी बातों का ढङ्ग ऐसा है कि दूसरे का क्रोध शान्त हो जाता है। सबसे बड़ी बात उसकी यह है कि किसी को भी दुःख में नहीं देख सकता। हर व्यक्ति का दुःख बांटने के लिए तैयार हो जाता है। अक्सर वह

ऐसा भी करता है कि किसी दूसरे को बचाने के लिए उनकी मुसीबत अपने सर ले लेता है। कई बार उसने अपने क्लर्क साथियों की गलतियाँ अपने माथे पर चिपका ली हैं। मैनेजर उसके काम से, उसके ढङ्ग से और उसकी सादगी से बहुत खुश था। पर आज के लेट आने पर वह बेहद नाराज़ हुआ। उसने उसे कह दिया।

"मिस्टर यशपाल, कल तुम्हारी तरक्की हुई और आज तुम काम को निगलेक्ट (neglect) करने लगे। तुम कहाँ थे, मैं सब जानता हूँ। जाओ, अपना काम करो। अगर फिर कभी ऐसी हरकत की तो नौकरी से हाथ धोने पड़ेंगे।"

यशपाल हक्का-बक्का-सा वहाँ से खिसकने लगा। इतने में मैनेजर ने फिर आवाज़ लगाई। यशपाल फिर घबरा गया, जैसे डाँट सुननी अभी बाकी रह गई थी।

मैनेजर ने कहा–"मैंने तुम्हारी ड्यूटी बाहर काउण्टर पर लगाई है चेक लेने और वापस करने पर। सावधानी से काम करना।"

यशपाल "यस सर" कहकर बाहर निकल गया।

बाहर उसकी मेज पर बैठने वाला साथी मिला। उसने कहा—"वह लड़की······"

यशपाल बात काटकर बोला—"बड़ी अनलकी (Unlucky) है, उसका नाम मत लो!"

साथी ने कहा—"अनलकी होना तो बुरी बात नहीं, बेवफा होना बुरी बात है। मुझे जिन्दगी में ऐसी लड़कियों से वास्ता पड़ा है।"

यशपाल उसकी बात का जवाब दिये बिना ही खिसक गया

क्योंकि आज उसने गोरी के बारे में भी कुछ ऐसा ही अनुमान कर लिया था ।

वह काम करते हुए लंच तक यही सोचता रहा—'कल मुलाकात हुई । मैंने उसे पसन्द किया उसने भी मुझे पसन्द किया और आज ही प्रेम का रिजल्ट आउट हो गया ।' फिर उसने सोचा—'नहीं, यह मेरी भूल है । मैंने उसे खामखाह अपनी सजनी समझ लिया । लेकिन होटल में उसने मेरा बिल क्यों चुकाया ?'

दूसरे क्षण उसके दिल ने सवाल किया—'तुमने उसे बचाया क्यों था ?'

'आदमी के नाते ।'

'उसने भी आदमी के नाते ही तुम्हारी मदद की ।'

'हमारे बीच सिवा आदमी के नाते कोई नाता नहीं हो सकता ।'

'ठीक है । मैं खामखाह कुछ और समझने लगा हूं ।।

दोपहर तक यशपाल ऐसी ही बातें सोचता रहा ।

लंच के वक्त से पहले ही यशपाल ने फैसला कर लिया था कि वह आज उस होटल में नहीं जायगा—जहां कल उसका अनादर हुआ था । बल्कि उसने कल ही यह फैसला कर लिया था कि इस होटल में कभी नहीं आऊंगा । ये लोग ग्राहक को दो कौड़ी का समझते हैं । मैं नहीं जाऊंगा...।

किन्तु जिस तरह शराबी हर रोज न पीने की कसम खाता है और फिर शाम होते ही पीने लगता है, उसी तरह यशपाल भी दोपहर को अनजाना-सा उस होटल में जा पहुंचा ।

जब ब्वॉय ने ग्राकर पूछा—"क्या चाहिए साब ?" तब वह चौंका। उसकी नजर उस केबिन की तरफ थी जिस केबिन से कल गोरी निकलकर ग्राई थी। यशपाल ने चौंक कर कहा—"एक प्लेट सेण्डविचेज !"

ब्वाँय ने कहा—"खीसा पाकिट पहले देखना माँगता है साब, ग्राज वह लड़की इधर नहीं ग्राया।"

यह ग्रन्तिम वाक्य उसके लिए चौंका देने वाला था। वह उठा ग्रोर वाहर निकल गया, जैसे वह यहाँ केवल गोरी के दर्शन करने के लिए ही ग्राया हो या उसके विषय में पूछने ग्राया हो कि वह ग्राई है या नहीं।

वह बाहर निकल कर बिल्कुल खोया हुग्रा-सा चर्च गेट की तरफ बढ़ गया। उसने सोचा कि वह ग्राज खाना हीं नहीं खायगा। किन्तु भूख मनुष्य को कहाँ साँस लेने देती है ? ग्रपने हॉस्टल से सुबह वह केवल चाय के दो कप ही पीकर निकला था ग्रोर ग्रब उसके पेट में चूहे दौड़ रहे थे। वह 'ग्रन्नपूर्णा' की ग्रोर बढ़ गया।

वहाँ जाकर उसने चार ग्राने के कूपन खरीदे ग्रोर प्लेट लेकर पंक्ति में खड़ा हो गया। जब उसकी बारी ग्राई ग्रोर वह चमचे से 'स्लाइस' उठाकर ग्रपने प्लेट में रखने लगा तो किसी ने प्लेट के ऊपर प्लेट रख दी। स्लाइस उस प्लेट में पहुँच गया। यशपाल चिढ़ गया। उसके मुँह से निकला—"यह क्या बद्तमीजी है ?" ग्रोर जैसे ही नजरें उस व्यक्ति पर पड़ीं—"ग्राप, ग्राप !" कहकर वह चुप हो गया ग्रोर उस व्यक्ति की प्लेट में थालों में से चीजें उठा-उठाकर रखने लगा।

ग्रन्नपूर्णा के वेटर ने ग्राकर कहा—ग्रापके कूपन चार ग्राने के हैं।

और माल दस आने का है।"

गोरी फिर होंठ दबाकर मुस्कुराने लगी। यशपाल फिर नर्वस हो गया। गोरी ने अपने आठ आने के कूपन वेटर के सामने रख दिये।

यशपाल बोला—"लो उठा लो, हम ऐसे थोड़े ही ले रहे हैं।"

प्लेट लेकर जब दोनों पंक्ति से बाहर निकले तो यशपाल ने कहा— "आप हर विपदा में देवी की तरह आकाश से उतर कर आ जाती हैं।"

गोरी बोली—"आकाश से नहीं, धरती से।"

दोनों मेज पर बैठ गये। यशपाल इधर-उधर देखकर यह कहते हुए उठा—"आप खाइये, मैं पानी लेकर आता हूं।"

गोरी उससे पहले ही यह कहकर उठ गई—"यह मेरा धर्म है। आप खाइये।"

गोरी पानी लेने चली गई और यशपाल उसके आखरी धर्म के शब्द पर विचार करने लगा। धर्म कैसा? काहे का धर्म? वह उसे जाते हुए, नल से पानी भरते हुए, देखता रहा।

गोरी जब पानी के दो गिलास लेकर आई तो यशपाल उसकी ओर ही देख रहा था। उसकी दृष्टि में एक जिज्ञासा थी, कुछ जानने का उत्साह था। लेकिन उसके उत्साह में उसकी कायरता मिली हुई थी या शराफत—वह पूछ न सका। वह अपने मन के सन्तोष के लिये यह पूछना चाहता था—'सेवा-धर्म तो पत्नी का होता है या माँ का होता है। फिर यह उसकी कौन है?"

"खाइये ना।"—गोरी ने उसकी प्लेट की तरफ इशारा करके कहा।

"जी हाँ, जी हाँ।" कहकर यशपाल खाने लगा। लेकिन खाते हुए भी उसकी जिज्ञासा कम न हुई। उसने आखिर हिम्मत करके पूछा,—"यह आज का दिन......?"

गोरी ने अपने लाल-लाल होंठों पर उगँली रख कर चुप रहने का इशारा किया और बोली—"खाते में बोलते नहीं।"

उसकी बात सुनकर यशपाल की बात हलक में अटक गई। फिर खाते हुए दोनों में कोई बात न हुई। यशपाल उसकी ओर देख रहा था। नजरों से शायद कुछ कहने की कोशिश करता रहा और गोरी केवल मुस्कुराती रही—बिना देखे बिना कुछ कहे।

खाने के बाद दोनों हाथ धोकर बाहर निकल आये। यशपाल ने पूछा—"चलते हुए तो बात करने की मनाही नहीं है ना ?"

गोरी हँस पड़ी—"ना ! भागते हुए बोलना नहीं चाहिए। सेहत के लिए बुरा होता। हाँ, चलते हुए हल्की-फुल्की कोई लाईट-सी 'टॉक' (Talk) की जा सकती है।"

यशपाल दिल ही दिल में अपनी जिज्ञासा को हल्की-फुल्की 'टॉक' का रूप देने लगा, लेकिन वह दे न सका। तब उसने पूछा, "हल्की फुल्की 'टॉक' किसे कहते हैं ?"

गोरी बोली—"जैसे यह कि मैं कल वाले होटल में गई और आप नहीं थे।" ब्वॉय ने कहा—"आप आकर चले गये हैं'। शायद कल के पैसे देने आये थे। मैं बाहर निकली तो आप पर नजर पड़ गई। आप पहले चर्च-गेट की तरफ बढ़े और अन्नपूर्णा की तरफ आ गये। बस, यही हल्की-फुल्की 'टॉक' है।"

यशपाल ने जल्दी-जल्दी कहना शुरू किया—"तो सुनिये, मेरी बात

इससे ना हल्की-फुल्की है। मैं दादर स्टेशन पर सुबह सवा सात बजे से लेकर नौ बजे तक आपकी राह देखता रहा और आप .....”

गोरी बोली—“क्यों राह देखते रहे ?”

“वह—वह।”—यशपाल हकलाने लगा।

गोरी मुस्कुराने लगी।

“बस यों ही।”

गोरी ने कहा –“नहीं,यों कहो कल का बिल चुकाने के लिए।”

यशपाल को सहारा मिल गया—“जी हां, जी हां। बिल चुकाने के लिये। सच कहा आपने।”

गोरी बोली—“तो फिर चुकाया क्यों नहीं ?”

यशपाल फिर लड़खड़ा गया। बात बनाना छोड़कर बोला—“आप अकेली जो नहीं थीं।”

“किसी का कर्जा चुकाने के लिए क्या तनहाई की भी जरूरत होती है ?”

यशपाल बोला—“नहीं ऐसी बात नहीं।”

“फिर आप चुका देते ?”

“पर वह आपके साथ कौन था ?”

“क्यों ? आपका मतलब ?”

“जी...... वह, बात......!”

गोरी मुस्कुरा कर बोली—“मैं आपकी बात समझ गई, उसको खोलने से कोई फायदा नहीं। मैं आपसे बिल नहीं लूंगी, जाइये। आपका बैंक सामने है और मेरी बस भी आने वाली है।” इतना कहकर उसने दोनों हाथ जोड़ दिये।

यशपाल जैसा का तैसा खड़ा रह गया। उसके जीवन में गति नहीं थी। कल जहां वह खड़ा था, आज भी वहीं खड़ा है।

मनुष्य जीवन में गति चाहता है। गति का नाम ही जीवन है। अगर कोई आगे नहीं बढ़ सकता तो पीछे हटने लगता है। मगर ज्यों का त्यों खड़ा रहना पसन्द नहीं करता।

यों यशपाल के जीवन में गति थी। उसकी तरक्की हो रही थी। मगर गोरी के मामले में यह जो प्रेम का उसने पहला अनुभव किया था, उसमें गति नहीं हो रही थी। अगर यह प्रेम आगे नहीं बढ़ सकता तो उसे यह रास्ता छोड़ देना चाहिए, किसी के लिए।

वह यह जानना चाहता था कि गोरी उसके बारे में उसी की भांति आज उसी का विचार करती रही या नहीं। प्रेमी की यह अजीब आदत है कि वह अपने प्रिय को अपने प्रेम में तड़पता हुआ देखना चाहता है। वह समाचार सुनना चाहता है कि उसके लिए किसी का मन बेचैन है, रातें तारे गिनने में कट जाती हैं और हर दिन एक नई आस से उदय होता है और वह आस होती है प्रेमी के प्रेम की। किन्तु मन दुःखी होकर रात के अंधेरे में डूब जाता है जब प्रेमी को प्रिय के मन की थाह नहीं मिलती !

पर गोरी अपने मन का भाव छिपाये हुए थी। वह कुछ नहीं कहती थी। उसने यह तक भी न बताया कि उसके साथ सवेरे दादर स्टेशन पर कौन था। यशपाल के पास सिवा अनुमान और शंकाओं के कुछ न था। गोरी के पीछे उसने लम्बे-लम्बे कदम भरे और जाकर बोला—"कल मुलाकात होगी ?"

"क्यों ?"—गोरी ने फिर उसे निरुत्तर कर दिया।

अब यशपाल सहन न कर सका। बोला, "मैं, मैं···" और फिर उसकी आंखें लेश मात्र को भींग सी गईं।

गोरी को तरस आ गया, बोली—"आज सवेरे मेरे साथ चाचा जी थे।"

"जी ? चाचा जी ?" यशपाल की आँखों में फिर से चमक आ गई। लीजिये ! मैं पहले ही कहता था यह और कोई नहीं हो सकता।"

"और कौन ?"—गोरी ने अपनी भौंहें सिकोड़ कर प्रश्न किया।

यशपाल डर-सा गया। बोला—"क्षमा कीजिये कोई भी ! मेरा मतलब ऐक्सीडेण्ट से बचाने वाला।"

गोरी बोली—"आजकल लोगों के मन में सिवा पाप के और कुछ नहीं होता। वह अपने मन का पाप लोगों के मत्थे पर मढ़ते रहते हैं। जाइये ! अब आपसे कभी मुलाकात नहीं होगी।" इतना कह कर वह बस में बैठकर लोप हो गई।

किन्तु यशपाल उसकी नाराजगी पर उदास न हुआ; मुस्कुराता रहा क्योंकि अब उसके मन की सारी शंकाएँ, सारी कालिमाएं दूर हो गई थीं। 'वह अब नहीं मिलेगी।' इसका भी उस पर कोई प्रभाव न पड़ा।

दूसरे दिन फिर 'अन्नपूर्णा' में ही दोनों की भेंट हो गई। दोनों अलग-अलग पंक्ति में प्लेट लिये खड़े रहे। एक दूसरे की ओर उन्होंने देखा तक नहीं किन्तु बैठे एक ही मेज पर क्योंकि और कोई जगह खाली न थी। आज वह फिर कुछ पूछना चाहता था। पर गोरी की वह बात 'खाते हुए बात नहीं करते' उसे याद थी। फिर बोलता कैसे। दोनों खाने में व्यस्त रहे।

इसके बाद जब दोनों हाथ धोकर चले, तो यशपाल ने कहा—"मैं हल्की-फुल्की सी बात करने का हक रखता हूँ।"

"मैं सुनने को तैयार नहीं।" गोरी बोली।

"क्यों ?"

"हमारी मरजी।"

"यह मरजी अच्छी बात नहीं। दफ्तर में मैनेजर की मरजी से काम करता हूं। हॉस्टल में मैडम सोफिया की मरजी पर चलना पड़ता है। सड़क पर ट्रैफिक वालों के रूल्स (Rules) लागू हैं। इस पर अगर आपकी मरजी भी पल्ले बाँध लूँगा तो जीना मुश्किल हो जायगा मैं बोलता हूं आप सुनिये, या न सुनिये।"

गोरी हंस पड़ी और उसकी बात सुनने लगी। आज उसने गोरी से अपने जीवन की बातें कहीं। कोई भाई नहीं है। माँ नहीं है। दुनिया में कोई नहीं है। वह अकेला है। मामा ने पाला, अब मामा भी मर गये। कल तक वह दुनिया में बिलकुल अकेला था, और आज गोरी...

अकेले आदमी पर दया करना नारी का स्वभाव है। अकेलापन उसे जरा भी अच्छा नहीं लगता। संसार भरा हुआ होना चाहिए। घर-गृहस्थी सब भरी-पूरी रहनी चाहिए। अकेला आदमी तो जंगल के वृक्ष की तरह होता है। हवा के झोंकों से अकेला ही झूलता है। आँधियों में अकेला खड़ा रहता है। बरसात और तूफान भी उसे अकेले ही सहने पड़ते हैं।—गोरी की आँखें सजल हो गईं। वह बोली—"मैं भी अकेली हूं। एक चाचा हैं और वह भी अपने कारोबार में व्यस्त रहते हैं। अकेलेपन के दर्द को मैं जानती हूं। और अब शायद हम अकेले नहीं रहेंगे।" इतना कहते-कहते गोरी लजा गई।

यशपाल के अन्दर कुछ अजीब-सी गुदगुदी होने लगी। किन्तु आज मुलाकात इससे आगे न बढ़ सकी।

उसके बाद वह प्रायः मिलते रहे। दोपहर को होटलों में, शाम को मैरिन-ड्राइव की सुन्दर सड़क पर जहां एक ओर प्रकृति का समुद्र है ठाठें मारता हुआ और दूसरी ओर इन्सान की बनाई हुई ऊंची-ऊंची बिल्डिगें अपनी सुन्दरता लिये खड़ी हैं।

●

४

●

बम्बई के डांकयार्ड पर उस दिन काफी भीड़ थी। रविवार के दिन छुट्टी तो होती ही है किन्तु बम्बई की गाड़ियों में भीड़ ज्यादा भरने लगती है। सात दिन कोल्हू के बैल की तरह चलनेवाली जिन्दगी रविवार को सांस लेने के लिए रत्ती भर रुकती है। बम्बई में लोग दिन को दफ्तर, कारखानों और बाजारों में घूमते हैं। रात को बन्द फ्लेटों में घुस कर सुबह फिर मशीनों और दफ्तरों की खुराक बनने के लिए अपने कलेजे की बेट्री चार्ज करते हैं। इस उकता देने वाले जीवन और थका देने वाली सपाट जिन्दगी से घबराकर छुट्टी के दिन लोग घरों से निकल भागते हैं और कभी-कभी तो बम्बई से ही भाग जाते हैं।

सुबह सात बजे से ही डांकयार्ड से एलीफेण्ट-केव्ज आदि के लिए जहाज चलने शुरू हो जाते हैं और लोग इधर-उधर सैर-सपाटे के लिए निकल जाते हैं।

भिखारियों की टोलियां भी उस दिन बम्बई की सड़कों को छोड़ कर स्टेशनों और डांकयार्डों पर ही जमा होने लगती है। उस दिन भी रविवार था जब एक भिखारिन ने हाथ फैला कर कहा—"जोड़ी

सलामत रहे।"

यशपाल ने गोरी की ओर देखा और गोरी ने क्रोध की दृष्टि से भिखारिन की ओर।

भिखारिन ने फिर नम्रतापूर्वक कहा—"सदा सुहागिन रहो, दुखिया का पेट भर दो।"

यशपाल ने भिखारिन को डाँटा—"क्या बकती है? यह बात नहीं है जो तू .." और फिर वाक्य पूरी होने से पहले ही उसने गोरी की ओर देखा।

गोरी मुस्कुरा दी और उसने अपना पर्स खोलकर चवन्नी उसके हाथ पर धर दी।

यशपाल मुँह खोले देखता रहा। जिस बात पर यशपाल यह समझ रहा था कि गोरी को क्रोध आ जायगा उसी बात पर गोरी ने भिखारिन को इनाम दे दिया। किसी छिपी हुई इच्छा की पूर्ति को निकट जान कर यशपाल मन ही मन प्रसन्न हो उठा और फिर अपनी समझी हुई बात को विश्वास का रूप देने के लिए, अपने हृदय की बात गोरी के मुँह से सुनने की इच्छा से बात कुरेदने लगा—"यहाँ के भिखारी भी बड़े जाहिल हैं। बिना सोचे-समझे ही बात मुँह से निकाल देते हैं।"

गोरी बात के पीछे की बात समझ गई इसलिए छेड़ने के खातिर बोली—"कोई कुछ समझ कर बात करता है, कोई कुछ समझ कर। कोई उस का मतलब कुछ और ही निकाल लेता है तो बुद्धू कौन हुआ?"

"जी···? वह······क्या मतलब?" यशपाल झेंप गया।

गोरी होंठ दबाकर मुस्कुरा दी —"जी हां ! वही जो आप•••!!" जहाज का सीटी बज उठी और वे जहाज में बैठ गये। चोट खाकर भी यशपाल ने अपने मन की बात नहीं छोड़ी। वह बोला—"जो नाता हमारे बीच नहीं है उसका वास्ता देकर भिखारिन भीख मांग रही थी और तुमने भीख दे दी। मैंने तो गलत नहीं समझा।"

गोरी ने यशपाल की ओर देखा। थोड़ी देर देखती रही फिर उसने अपनी आंखें धीरे-धीरे विशाल सागर पर गाड़ दी। और धीरे-धीरे यशपाल की बात का उत्तर देने लगी—"उसने क्या कहा था। आपको याद है—?"

यशपाल ने कहा—"बिलकुल ! मैं कैसे भूल सकता हूं। उसने कहा था। 'जोड़ी सलामत रहे।' और तुमने उसे चवन्नी दी।"

गोरी ने कहा—"जी नहीं, मैंने इस वाक्य पर उसे पैसा नहीं दिया।"

"हां हां...।" यशपाल ने बीच में ही बात काट कर कहा—"मुझे याद आया। उसने कहा था—'सदा सुहागिन रहे,' यह बात भी तो अच्छी नहीं।"

गोरी ने कहा—"इसमें बुराई क्या है ? संसार की हर औरत मरते दम तक सुहागिन ही रहना चाहती है और इससे बड़ा आशीर्वाद नारी के लिए कोई दूसरा तो हो ही नहीं सकता।"

"पर तुम तो अभी...मेरा मतलब है...।"यशपाल बात पूरी करने के लिए हकलाने लगा।

"कुंवारी हूं।"

"हाँ, यही मेरा मतलब था। फिर यह आशीर्वाद निरर्थक नहीं हुआ ?"

"आपको क्या पता कि मैं...।" गोरी ने इतना कह कर अचानक उसके चेहरे पर नजरें गाड़ दीं और वाक्य को पूरा न किया। उसे मन में ही रख कर यशपाल के चेहरे के भाव देखने लगी।

यशपाल तड़प-सा गया—"जी ! मुझे तो यही पता है। और आपने आज तक कभी ऐसी बात का इशारा तक नहीं किया ?" यशपाल अपनी टाई ठीक करने लगा फिर कोट को कालर से पकड़ कर अपने कंधों के उपर खींचा जैसे नीचे सिरक गया हो।

"ऐसी बात कहने की कोई आवश्यकता तो थी नहीं।" गोरी इतना कहकर फिर चुप हो गई।

अब यशपाल एक तरह से हवा में लटक गया—'गोरी कुँवारी है या विवाहित ?' यह सवाल उसके मन में चुभने लगा—'अगर विवाहित है तो मेरे साथ इस तरह क्यों घूमती है ?' फिर उसे ध्यान आया—'इसने मुझे अपना हाथ तक नहीं छूने दिया—विवाहित होने के कारण ही ?'

गोरी समुद्र पर फिसलते जहाज के साथ टकराने वाली मौजों को देखती रही। वह कभी-कभी यशपाल की दृष्टि बचा कर उसकी ओर भी देख लेती और मन ही-मन मुस्कुरा भी देती।

समुद्र की एक बड़ी लहर जहाज से टकराई और उसके कुछ छींटें गोरी के मुँह पर पड़े। साड़ी के आँचल से उसने अपना मुँह पोंछ लिया और पर्स से आईना निकाल कर अपना चेहरा देख कर बाल ठीक करने लगी।

यशपाल उसको देख रहा था।

गोरी ने कहा—"यों मौन धरे क्या बैठे हो ?"

यशपाल बोला—"मैं यह सोच रहा हूँ कि कभी तुमने मुझे उन से मिलाया क्यों नहीं ?"

"किससे ?"

"अपने पतिदेव से।"

"आपने मिलने को कहा कब था ?"

"मुझे तो आज तक मालूम ही नहीं था कि आपकी शादी हो चुकी है ?"

गोरी ने तिरछी नज़रों से देख कर कहा—"अब तो मालूम हो गया न। जब कहिए उनसे मिला दूं।"

"आज ही, मैं उनसे आज ही मिलना चाहता हूँ।"

गोरी ने चिढ़ाते हुए कहा—"आज ही ? इतना जल्दी क्यों ?"

"मैं उस खुशकिस्मत आदमी को देखना चाहता हूँ, जिसके...।"

गोरी ने मुस्करा कर कहा—"कहिये तो अभी मिला दूं, इसी वक्त।"

"इस जहाज में !" यशपाल ने चारों तरफ देख कर सोचा—'जहाज में ऐसा कौन भाग्यशाली हो सकता है जो गोरी का पति हो और गोरी उसके पास न बैठ कर यहाँ मेरे पास बैठी हो ? बात क्या है ?"

गोरी ने उसके दिल की बात समझ ली। बोली—"वहाँ क्या देख रहे हैं ? मेरे बताये बिना आप कभी नहीं जान सकते। मैं दिखाऊंगी तो फौरन पहचान जायेंगे आप।"

यशपाल ने खुशामद-भरे स्वर में कहा—"तो बताइये।"

गोरी ने अपने हाथ का आइना उसकी तरफ कर दिया और कहा—"इसमें उनकी तस्वीर नजर आ जायगी आपको।"

यशपाल को आइने में सिवा अपनी सूरत के और कुछ भी नज़र न आया। वह हड़बड़ा कर बोला,—"यह तो मैं हूँ।"

गोरी बोली—"हाँ!" और लजा गई। उसका दिल धड़कने लगा। नाड़ियों में बहने वाला खून उत्तेजित हो उठा। उसकी लाली उसके कपोलों पर झलकने लगी।

यशपाल को न उसके कपोलों की लाली दिखाई दी न उसके हृदय की धड़कन सुनाई दी और न ही वह गोरी के मन को मथ देने वाले भावों को समझ सका।

वह एक अनाड़ी की भाँति बोला—"लेकिन हमारी शादी कहाँ हुई है?"

गोरी कुछ देर चुप रही और फिर क्षितिज की ओर देखकर गंभीर स्वर में बोली—पंडितों के मंत्र-उच्चारण करने से केवल मर्द का ब्याह होता है, नारी का नहीं। नारी के मन-मन्दिर में तो जो एक बार आकर बिराजता है वह पुरुष-विशेष होता है और उसी के साथ मन ही मन उसका विवाह हो जाता है। नारी का विवाह जन्म-जन्मान्तर का नाता होता है। वह न तो मन्त्रों के उच्चारण से पक्का होता है और न संसार की इस आधुनिक व्यवस्था में पड़ कर वह टूट ही सकता है।"

गोरी भाव के आवेश में प्राचीन काल से लेकर इस काल तक चली आने वाली एक सत्यता प्रकट कर रही थी और यशपाल बुद्धू की तरह मुँह खोले उसकी बात सुन रहा था। आज उसके मन में लेश मात्र भी शंका न रही कि गोरी उसकी नहीं है और वह तो गोरी का था ही।

इन्हीं बातों में जहाज कब ऐलीफेण्टा केव्ज तक पहुँचा और कब

वे लोग उतर कर कलाकारों की बनाई हुई महान् गुफाओं में कलाकृतियाँ देखने में तन्मय हो गये। दोनों में से किसी को भी पता न चला किन्तु वातावरण के बदल जाने से उनमें भी एक तबदीली आ गई।

कुछ अंगरेज लोग मूर्तियों को कला का एक विचित्र द्योतक समझ कर देख रहे थे और हिन्दुस्तानी गाइड उनको टूटी-फूटी अंगरेजी भाषा में समझा रहा था कि मूर्ति कब बनी, कैसे बनी और क्योंकर बनी ?

यशपाल उस गाइड की ओर देख लेता और उसकी जानकारी पर हैरान होने लगता। गोरी को यह आडम्बर अच्छा न लगा। वह यशपाल का हाथ खींच कर अलग हो गई।

अर्धनारीश्वर की मूर्ति के सामने जाकर यशपाल हँसने लगा—"यह कैसा भगवान् है, न जनाना न मरदाना ?"

गोरी ने हाथ जोड़ कर मूर्ति को नमस्कार किया। उसका मन भावना से भर गया। वह गद्‌गद् हृदय से मूर्ति की ओर थोड़ी देर देखती रही। उसकी भावना देख कर यशपाल की हँसी गले में अटक गई। गोरी ने कहा—"रुक क्यों गये ? इस मूर्ति को देखो और हँसो। तुम लोग न बात को समझते हो, न कला को इसीलिए तुम्हें जीवन का रस नहीं मिलता।"

यशपाल को बात अच्छी न लगी। एक लड़की इस तरह उपदेश देती हुई किसी भी नौजवान के स्वाभिमान को चोट पहुँचा देती है। यशपाल ने चिढ़ कर गोरी की तरफ देखा और करीब हो कर बोला—"ऐसा आज तक कोई एक भी प्राणी संसार में हुआ है जिसका आधा धड़ मर्द का हो और आधा औरत का ? और जो तुम कला की बात कर रही हो, सो कला जीवन के चित्र बनाती है। जिस कला का जीवन से कोई सम्बन्ध नहीं, वह कला क्या ?"

गोरी ने उसकी ओर देखा और फिर मूर्ति की ओर देख कर बोली—"जो जीवन है वह इस मूर्ति में विद्यमान है। यह पुरुष और प्रकृति का चित्र है। पुरुष और प्रकृति से संसार है और इसी से जीवन है। मर्द पुरुष है, औरत प्रकृति। जब तक दोनों इसी भाँति मिल कर एक नहीं हो जाते, संसार नहीं चलता। और यदि चलता है तो उसमें रस नहीं होता, पाप होता है, दुराचार होता है। हर प्राणी के अन्तः-कक्ष में पुरुष और प्रकृति दोनों है किन्तु पुरुष और नारी अपने आधे-आधे अंग को संसार में खोजते हैं।" फिर वह क्षण भर यशपाल की ओर देखती रही बोली—"पुरुष तो नहीं ढूँढता केवल नारी ही ढूँढती है। नारी पुरुष को रिझाती है और उसके जीवन का अंग बन जाती है, तब संसार चलने लगता है। महान् कलाकार ने इस मूर्ति में यही उजागर किया हैं। आजकल अपने आपको प्रगतिशील कहने वाले लोग इस बात को तो समझते ही नहीं। कला को केवल जीवन का चित्रण मान कर वे मन से चित्र बनाते रहते हैं। चित्र को देखकर मन में क्या भाव उत्पन्न होते हैं, इनसे चित्रकारों को कोई वास्ता नहीं। ज़रा इस मूर्ति को कुछ क्षण नज़र भर कर देखते रहो फिर-देखो तुम्हारे मन में क्या भाव प्रगट होते हैं ? मनुष्य में जो अपूर्ण का अहसास है वह निकल जायेगा और ऐसा लगेगा कि वह पूर्ण है।"

यशपाल मूर्ति की ओर ध्यान से देखने लगा। गोरी मूर्ति को प्रणाम करके सामने से हट गई। थोड़ी देर के बाद यशपाल ने घूम कर देखा और उसे अपूर्णता का अहसास बड़े जोर से होने लगा क्योंकि गोरी वहाँ न थी। यशपाल को अब अधूरेपन का अनुभव होने लगा। वह लम्बे डग भरता हुआ गुफा से बाहर आ गया। बाहर निकलते हुए उसने एक बार मूर्ति को प्रणाम किया और गोरी को खोजने लगा।

यशपाल गोरी को खोजता हुआ उस ओर जा निकला जहाँ पानी का कुआँ है। गोरी कुएं की मुंडेर पर बैठी कुएँ को देख रही थी। उसमें पानी का स्तर देखने के लिए लकड़ी का नाप भी लगा था। पानी कुछ ज्यादा दूर न था, पास ही था। यशपाल ने उसके पास आकर कहा—"तुम तो मुझे भगवान के पास ही छोड़ कर चली आईं ?"

गोरी बोली—"भगवान् को पा लेने के बाद और किसकी आवश्यकता रहती है ?"

"तुम्हारी" यशपाल के मुँह से अचानक ही यह वाक्य निकल गया और फिर वह अपने वाक्य पर खुद ही लजा गया बिलकुल उसी तरह जैसे गोरी जहाज में उसे आईना दिखाकर शरमा गई थी।

गोरी की दृष्टि निर्मल पानी पर फिसल सी गई और वह वहाँ से उठकर धीरे-धीरे उस ओर चली गई जहाँ बड़ी त्रिमूर्ति संसार के आदि मध्य और अन्त के रूप में दिख रही थी—ब्रह्मा… विष्णु… महेश…। गोरी ने पलट कर यशपाल की ओर देखा और कहा—"ये ब्रह्मा, विष्णु और महेश हैं। उत्पत्ति, स्थिति और लय के देवता ये तीनों प्राकृतिक गुण हैं।"

"अच्छा है।" यह कहकर यशपाल अपनी झेंप मिटाने लगा।

वहाँ से हट कर वे फिर गुफा के बाहर आ गये। एक चट्टान पर दोनों बैठ गये। गोरी ने खाने का डब्बा खोला और आलू के पराठे निकाले। पराठों की रंगत और गेहूँ की सुगंध पर यशपाल के मुँह में पानी भर आया। गोरी को छेड़ सूझी, बोली—"आप तो खा कर आये होंगे ? लेकिन मैं भूखी निकली थी। चाचा जी ने कहा

था, बेटी, जाते हुए खाने को कुछ ले जाना, वहां कुछ मिलेगा नहीं इसलिए मैं अपने लिए थोड़ा ले आई हूँ।"

यशपाल असमन्जस में पड़ गया। क्या कहे ? अगर कहता है—खाकर आया हूँ तो भूखा मरेगा, और अगर नहीं, तो गोरी उसके लिए ,कुछ लाई न थी। वह बोला—"जी हाँ ! मैं तो खा कर ही आया था।"

गोरी होंठ दबा कर मुस्करा दी। उसके गाल का तिल उसकी मुस्कराहट पर काँपने लगा। यशपाल की भूख उस तिल को ही देख कर तृप्त हो गई। गोरी ने तिरछी निगाहों से देख कर कहा—"तुम लोग झूठ क्यों बोलते हो ?"

झूठ · क्यों··कब ?"

गोरी ने जवाब दिया—"तुम तो बताओगे नहीं। मैं बताती हूँ कि झूठ क्यों बोलते हो ? केवल अपनी हेकड़ी रखने के लिए। तुम्हारा झूठा गर्व ही तुम्हें संसार में दुःखी कर रहा है। "तुम कहते हो कि तुम खाना खा कर आये हो। सुबह सात बजे से हम लोग एक साथ हैं। खाना कब खाया तुमने ?"

यशपाल से भी न रहा गया, बोला—"फिर तुमने पूछा ही क्यों ? क्या तुम जानती न थी ?"

"मैं तो देख रही थी कि तुम मुझे बेगाना समझते हो या······!"

इस वाक्य को यशपाल ने पूरा न होने दिया और उसके हाथ से रोटी छीन कर खाने लगा। गोरी इस छीना-झपटी पर खिलखिला कर हँस पड़ी। हँसते-हँसते लोट पोट हो गई। उसकी आँखों में आँसू आ गये। उसने आँचल से आँखों को पोंछा और फिर गिलास लेकर कुएँ की ओर भाग गई। यशपाल खाने में ऐसा मगन रहा कि गोरी कब

उसके पास आ कर बैठ गई और प्यार से उसे खाते हुए देखने लगी, इसका भी उसको पता न चला। जब उसे प्यास लगी, कौर उसके गले में अटक गया, हिचकी आने लगी, तब गोरी ने पानी का गिलास उसकी ओर बढ़ा दिया।

पानी पीकर यशपाल ने कहा—"अरे! तुमने तो खाया ही नहीं।"

गोरी ने कहा— "अब अगर मैं कहूँ भी कि मैं खा कर आई थी तो बिलकुल ही विश्वास नहीं करोगे।"

"झूठी बात पर कैसे विश्वास करूँगा?"

गोरी ने अपने सर पर आँचल को ठीक करके कहा—"यह झूठ नहीं है। आप लोगों के खा लेने से हमारा मन भर जाता है। और भूख पेट को नहीं होती, मन को होती है।"

फिर भी जो कुछ बचा-खुचा था, वही दो कौर खाकर गोरी ने पानी पी लिया।

अब दोपहर ढल रही थी। सूरज पश्चिम की तरफ बढ़ने लगा। लोगों के झुण्ड जाने की तैयारियां कर रहे थे। लेकिन गोरी और यशपाल समुद्र के किनारे एक चट्टान पर बैठे समुद्र की गलें मिलती मौजों की ओर देखते रहे। सम्भवतः उनके अन्दर भी प्यार और स्नेह की लहरें इसी प्रकार उठ रही थीं। वह दोनों काफ़ी देर चुप रहे।

गोरी ने काफ़ी देर के बाद इस स्तब्धता को भंग किया, कहा—"कितना सुन्दर स्थान है?"

नैसर्गिक सुन्दरता को देखकर यशपाल ने गोरी की आँखों की गहराई में झाँका।

गोरी चुप होकर स्थिर-मूर्ति की तरह हो गई। उसके मुख पर मन का स्थूल भाव जम गया।

यशपाल ने कहा—"इस सुन्दर स्थान को देख कर जी चाहता है कि आदमी इसी स्थान पर आत्म हत्या कर ले ताकि यह क्षण अमर हो जाये।"

गोरी का स्थूल भाव टूट गया। "जो सुन्दरता मनुष्य को आत्म-हत्या की ओर खींचकर क्रूरता की ओर ले जाये, वह सुन्दरता नहीं। यह क्या कह दिया तुमने ?"—गोरी ने हैरान होकर उससे पूछा।

यशपाल अवाक् सा हो गया। बोला—'मेरा मतलब यह नहीं।"

गोरी बोली—"यह बात तुमने किसी विदेशी किताब में पढ़ी होगी और वही यहाँ कह दी।"

यशपाल ने यह किताब की बात किसी तरह स्वीकार न की। बहस काफ़ी जोर पकड़ गई। विषय था 'विदेशी लिटरेचर और देशी साहित्य।'—यशपाल ने भी कालेज में शिक्षा पाई थी। कालेज में जो पढ़ा था वह उसे सब याद था। इसलिए वह अंग्रेजी साहित्य की मिसालें देता रहा और गोरी अपने भारतीय साहित्य की बातें करती रही।

बहस का नतीजा क्या निकला ? यशपाल को नई-नई बातों का पता तो चल गया, पर वह लड़की के सामने हार मानना ही नहीं चाहता था। और गोरी उसे समझाना चाहती थी कि आजकल के नौजवान सिवा पाकेट एडीशन के कुछ पढ़ते नहीं। इसलिए तुम्हारी बुद्धि भी पाकेट एडीशन बन गई है। इस बहस में कब एलीफेण्टा से आखिरी जहाज भी बम्बई जाने के लिए रवाना हो गया,

उन्हें पता ही न चला ? और सूरज ने जब पश्चिम की ओर सुर्खी घोल दी, तब गोरी चौंक पड़ी—"अरे ! यह तो दिन ढल गया। जहाज तो ५ बजे आने वाला था।"

दोनों भागे।

उन्हें दूर समुद्र की मौजों पर जहाज बम्बई की ओर जाता नजर आया! और उधर ही सूरज भी डूब रहा था।

एक मछेरे ने पास से गुजरते हुए कहा—"बाबू ! अत्ता जहाज सकाली मिलेल।" (बाबू ! अब जहाज सुबह मिलेगा)।

गोरी और यशपाल दोनों एक दूसरे की ओर देखते रह गये।

रात धीरे-धीरे आकाश से उतर कर एलीफेण्टा-केव्ज़ की विशाल मूर्तियों को, कलाकारों की महान् कला को, अँधेरे के आँचल में छुपाने की कोशिश कर रही थी—पुरुष का पुरुषार्थ प्रकृति के गुण में विलीन होता जा रहा था।

'एलीफेण्टा' टापू पर ये दो प्राणी जो प्रेम के मार्ग पर चलने की अभी तैयारी ही कर रहे थे—'रात कैसे गुजारें ?' यह चिन्ता किसी के मन में तो नहीं थी, उनकी व्यथा यह थी कि 'लोग क्या कहेंगे ? गोरी के घर में क्या होगा ? जवान लड़की रात को घर से बाहर रहे तो समाज की उँगलियाँ क्यों न उठेंगी ? पर आज का समाज आर्थिक परिस्थितियों में इतना विलीन हो गया है कि उसने पुराने ढरों को छोड़ दिया है। फिर भी गोरी के चाचा क्या कहेंगे ?...' यशपाल इसी सोच में डूब गया।

लेकिन यह झगड़ा तो रात के बीत जाने पर खड़ा होगा। और अभी तो सर पर रात खड़ी थी... और रात गुजारने का साधन खोजना जरूरी था। थोड़े समय तक गोरी और यशपाल इस तरह मौन रहे

जैसे वह मूक हों। मछेरा अपने जाल को समेट दूर निकल चुका था—गोरी ने कहा—रात कहाँ बिताएँगे ?"

"हाँ ! यही तो मैं भी सोच रहा हूँ। यहां तो सर्दी भी बहुत होगी।"

"चलो, उधर दूसरी ओर चल कर देखें। शायद कोई कश्ती मिल जाय या मोटर लाँच ही कोई नजर आ जाय।" इतना कहकर गोरी चल दी और यशपाल उसके पीछे-पीछे चलने लगा। दूसरी ओर का घाट अज्ञानी के मन की तरह स्वच्छ था। न लकड़ी की नाव और न मोटर-लाँच। केवल समुद्र की लहरें घाट से टकरा-टकरा कर लौट रही थीं। बिल्कुल ऐसे ही जैसे कुछ विचार गोरी और यशपाल के मन में उठ-उठ कर एक व्यथा उत्पन्न कर रहे थे।

"अब क्या होगा ?" यशपाल के मुँह से केवल इतना ही निकला।

गोरी बोली—"जीवन में जब इसी तरह आदमी कई बार अकेला रह जाता है तो क्या करता है ?"

"क्या करता है ?" यशपाल ने प्रश्न किया।

"वह जाने वालों की स्मृतियों को कलेजे में समेट कर जीवन फिर उसी प्रकार गुज़ारने लगता है जैसे पहले गुज़ार रहा था। जहाज तो मिलेगा कल। नाव है नहीं। अभी तो यह ऊँची-ऊँची चट्टानों और यह गुफाएँ ही हमारे जीवन-साथी हैं। रात किसी तरह इनके बीच में गुज़ार ही लेंगे।" वह मौन हो गई। जिस प्रकार कोई पुरुपार्थी पुरुपार्थ करके उसका फल भगवान पर छोड़ देता है उसी प्रकार गोरी ने अपने-आपको रात पर छोड़ दिया। 'जो होगा वह उसको भाग्य का चक्कर कह कर सहन कर लेगी।' पर थोड़ी देर के बाद वह बोली —"मैं सोचती हूँ कि दिन के उजाले मे जो कला

ज्योति प्रतीत होती थी, रात के अँधेरे में वही मृत्यु के समान दिखाई देने लगी है। यह क्यों?"

यशपाल ने कहा—"यह अन्तर अँधेरे-उजाले का है।"

"नहीं।" गोरी ने इस हाथ का वेग दूसरे हाथ में सँभालते हुए कहा—"आज के इन्सान की परिस्थितियों में ही मनुष्य को जीवन मृत्यु के और मृत्यु कभी-कभी जीवन के समान दिखाई देने लगती है।"

यशपाल की समझ में उसकी बात न आई। वह एक लम्बी-सी साँस लेकर बोला—"मुझे अपनी तो चिन्ता नहीं, तुम्हारी चिन्ता है। तुम्हारे घर वाले क्या सोचेंगे?"

"क्या सोचेंगे? यही न कि गोरी रात को अकेली कहाँ थी? इसकी टोह लगायेंगे। पर मैं किसी गैर के साथ तो हूँ नहीं, उसी के साथ हूँ ......।" इसके आगे की बात वह न कह सकी। लज्जा ने उसका आँचल पकड़ लिया।

आकाश पर चन्द्रमा अपनी पूरी कलाओं के साथ उदय हो चुका था। आज पूर्णमासी थी। और सागर चन्द्रमा को छूने की कोशिश कर रहा था। समुद्र के किनारे की चट्टानें जो सूरज के उजाले में काली-काली-सी दिखाई देती थीं अब चन्द्रमा की चाँदनी में चमक रही थीं। दूर सागर के उस ओर टीन के बने हुए मछेरों के घर भी चाँदनी ने उजागर कर दिये थे। वातावरण में समुद्र के शोर के सिवा कुछ न था...... बिलकुल खामोशी!

यशपाल एक चट्टान पर बैठ गया था और गोरी प्राकृतिक सुन्दरता को निहार रही थी। मछेरों की बस्ती से अब संगीत की आवाज़ आने लगी। वीराने गूँजने लगे। कोई गा रही थी—

"सागर तुझिया चरणी नमितो
अंतः करणी तुझ आराधितो
कृपा सागरा तुझ विनवितो
सांभाली यांना...... ...।"

(समुद्र ! मैं तेरे चरणों में नमन करती हूँ, और अंतःकरण से तेरी आराधना करती हूँ। कृपा-सागर ! मैं तुझसे विनती करती हूँ कि तू इन्हें सम्भाल)।

गोरी ने पलट कर उन घरों की ओर देखा और फिर बिना कुछ बोले यशपाल का हाथ पकड़ उसे चट्टान पर से उठा दिया और उस बस्ती की ओर बढ़ने लगी। गीत के स्वर स्पष्ट होते जा रहे थे—

"सागर तुझिया चरणी नमितो... .... "

"...सांभाली यांना .... सांभाली यांना......"

किसी घर में किसी मछेरे की शादी हो चुकी थी और बारात के बाद बिदाई भी हो गई थी। पति-पत्नी की आज सुहागरात थी और वह विरह की रात भी थी। गोरी को हैरानी हुई कि शादी के बाद विरह क्यों गाया जा रहा है ?

अभी गोरी और यशपाल बस्ती के पास नहीं पहुँचे थे कि दूल्हा (नवरा) कन्धे पर जाल डाले बस्ती से निकल कर समुद्र की ओर बढ़ता हुआ नजर आया। उसके पीछे दुल्हन (नवरी) अपनी सहेलियों के साथ विरह के गीत गाती आ रही थी।

यशपाल और गोरी वहीं रुक गये—

टोली अब समुद्र के किनारे पहुँच गई। दूल्हा अपने साथियों के साथ नाव में बैठा और अपने मजबूत भुजाओं से चप्पू उठा लिया। दुल्हन उसके पास आ गई और अपने हाथ में पकड़े हुए थाल से उसने दूल्हा के मुँह में मिठाई दी। वह मुस्कराता हुआ

खाने लगा। फिर उसने दुल्हन के मुँह में एक कौर दिया। फिर दुल्हन ने दूल्हा के मुँह में पान दिया और उसके चरण छुए। दूल्हा ने दुल्हन के दोनों हाथ पकड़े और उसकी आँखों में थोड़ी देर देखता रहा। अब सारा वातावरण मौन था। झींगुरों की आवाज तक सुनाई नहीं दे रही थी। समुद्र की लहरें अधिक बेताबी से उछल रही थीं। दूल्हा ने क्षण भर के बाद दुल्हन के हाथों में पहनी हुई सुहाग की चूड़ियाँ दबा कर तोड़ दीं। कड़कड़ा कर काँच के सारे टुकड़े धरती पर बिखर गए, और सखियों ने एक लम्बी और नीची लय के साथ दूल्हा की सलामती के लिए कुछ गाना शुरू किया और दूल्हा नाव खेता हुआ समुद्र के बीच बढ़ने लगा। सब किनारे पर रह गये। दुल्हन पिपासा-भरी दृष्टि से जाते हुए दूल्हा को देखती रही। और फिर थोड़ी देर के बाद वह नाव लहरों के झकोरे खाती हुई कहीं की कहीं चली गई।

"...घरधनी गेला दरिया पार...।"

दुल्हन और उसकी सखियाँ गीत गाती हुई लौट गईं और उनके पीछे ही यशपाल और गोरी भी चल दिये।

बस्ती के पास पहुँचकर सब अपने-अपने घरों को जाने लगे। दुल्हन ने भी एक घर में प्रवेश किया।

एक मछेरन ने टूटी-फूटी हिन्दी भाषा में गोरी से पूछा—"तुमी इधर कसा ?" (तुम यहाँ कैसे ?)

गोरी ने अपनी कथा कह सुनाई, थोड़ी देर बाद गोरी और यशपाल उस मछेरन के घर के साफ-सुथरे चौके में बैठे खाना खा रहे थे। वह मछेरन उनसे मीठी-मीठी बातें भी कर रही थी।

उसने कहा—"क्या तुमचा नवरा तुमची बंगड़ी तोड़ता।"

गोरी ने यशपाल की तरफ देखा। वह खाने में मग्न था। मछली

का काँटा खींच कर उसने थाली के बाहर रख दिया। गोरी ने मुस्करा कर कहा—"यह तो अपशकुन है। भला सुहाग ही सुहागन की चूड़ियाँ तोड़ दे ?"

मछेरन बोली—"हमारे इधर की रीत है, नवरी का नवरा बियाह के नन्तर जब पहली बार दरिया को जाता, तो अपने हाथ से सुहागन की बंगड़ियाँ तोड़ता जाता। जाने जीवत आये या न आये।"

गोरी ने दुल्हन की ओर देखा जो खिड़की से लटके हुए जाल को हाथ से थामे दूर तक समुद्र को देख रही थी और शायद सागर देवता से मन ही मन प्रार्थना कर रही थी—"सांभाली यांनां ....!"

यशपाल अभी तक चुप था। केवल भोजन ही 'पाए' जा रहा था।

मछेरन ने उसकी ओर देखा और बोली—"तुम्हारा नवरा तो बोलत नाहीं।"

गोरी मुस्करा दी और बोली—"गूँगा है।"

अब यशपाल ने हँसकर गोरी की तरफ देखा और फिर बोला—"हमारी अभी शादी नहीं हुई है। मैं नवरा नहीं हूँ।"

"काय ?" मछेरन ने देखा और फिर कुछ समझकर हँस दी।

इतने में एक लड़की ने आकर कहा—"आथरने केलेस। (बिस्तर लगा दिये गये हैं।)

गोरी बोली—"मैं तो दुल्हन के साथ सो जाऊँगी, वह भी बिचारी अकेली है। इन्हें दूसरे कमरे में पहुँचा दो।"

यशपाल ने गोरी की ओर देखा और फिर गोरी को मुस्कराते हुए देखकर लज्जित हो गया।

धीरे-धीरे उसने टीन की छत के तले प्रवेश किया जहाँ उसके लिए बिस्तर लगा था और वह एक आह भर के बिस्तर में घुस गया।

●

५

●

"मैन, तुम नाइट को किधर गोल था ? हमने तुमको देखा, तुम कमरे में नहीं होता। डिनर तुम्हारा ठण्डा हो गया, तुम कैसा आदमी है ?"

यशपाल के गेस्ट-हाउस में प्रवेश करते ही बूढ़ी आण्टी पंजे झाड़ कर उसके पीछे पड़ गई।

यशपाल ने कहा—"आण्टी हम एलीफेण्टा-केव्ज़ गये थे, वहाँ पर रात को जहाज मिस हो गया।" और फिर जल्दी-जल्दी अपने कमरे में जाकर कपड़े बदलने लगा। उसे दफ्तर जाने की जल्दी थी।

'ओन-गेस्ट-हाऊस' की मालिक मैडम सोफिया, जिन्हें आण्टी कहते थे, के पास दो-तीन ही ग्राहक थे। एक यशपाल, दो और जो ऊपर की छत पर रहते थे। बरांडा जो बालकनी की तरह था, पार्टीशन लगा कर तीन टुकड़ों में बाँट दिया गया था। इस 'बरांडी-कमरे' का रास्ता भी आण्टी के कमरे से होकर जाता था। आण्टी बूढ़ी थी, अकेली थी। उसका पति कई बरस पहले दुनिया के दूसरे महायुद्ध में मारा गया था। उसकी कोई सन्तान भी नहीं थी। उस समय सोफिया का यौवन भी मुरझाया नहीं था; इसलिए बांद्रा

ग्रौर भायखल्ला के कई क्रिश्चियन जो उसके ग्रौर उसके पति के नातेदार थे, सोफिया से 'कोर्ट•शिप' करने को तैयार थे। पर सोफिया हिन्दुस्तानी नारी की तरह ग्रपने पति की याद को कलेजे से चिपटाये ज़िन्दगी गुज़ारने का फैसला कर चुकी थी। किन्तु इस संसार के ग्रार्थिक कष्ट से छुटकारा पाना भी उसके लिए ग्रावश्यक था। क्या करती? तीस रुपये महीने की नौकरी तो उसे मिल गई, मगर यह सदा रहने वाली न थी। मकान के किराये में ही दस रुपये चले जाते थे। मकान ग्रच्छा था, दो कमरे ग्रौर एक बड़ा – बहुत बड़ा—खुला बरांडा।

बम्बई में १९४७ ई० के बाद इन्सानों का रेला जब पाकिस्तान को छोड़ कर हिन्दुस्तान की ग्रोर ग्रा गया, तो सिन्धी रिफ्यूजियों ने उसे बीस हजार पगड़ी तक की ग्रॉफर दी। ये ग्राफर देने वाला तो होशियार थे ही, पर सोफिया होशियार न थी। उसने न किसी की ग्राफर ली ग्रौर न 'कोर्ट-शिप' की। केवल ग्रपने मकान के बराण्डे को तीन भागों में बाँट कर तीस-तीस रुपये पर तीन ग्रतिथि रख लिये। बम्बई की भाषा में इन ग्रतिथियों को पेईङ्ग-गेस्ट कहते हैं।

शुरू-शुरू में वह यह ध्यान रखती थी कि उसके पेईङ्ग-गेस्ट ग्रपनी जवानी को खोकर बूढ़े हो चुके हों। ग्रौर ग्रगर कोई वर्किंग-क्लास की लड़की उसे मिल जाती तो वह बहुत खुश होती। किन्तु जब से उसके यौवन की कलियाँ मुरझा गई हैं, तब से वह नौजवान पेईङ्ग-गेस्ट रखने में कोई ग्रापत्ति नहीं समझती। पर उसके गेस्ट-हाउस में नौजवानों का टिकना मुश्किल होता था। महीने-दो-महीने के बाद हर कोई ग्राकर भाग जाता था। कारण? हर पेईङ्ग-गेस्ट से ठीक समय पर न ग्राने का कारण पूछती थी। शराब की भट्टियाँ उसके इलाके में ग्रधिक होने पर भी उसके गेस्ट-हाउस का कोई

आदमी शराब नहीं पी सकता था, और इस इलाके का शंकर दादा इस बात को जानकर भी सोफ़िया के खिलाफ़ कुछ नहीं कहता था क्योंकि सोफ़िया चालीस बरस से इस मुहल्ले में रहती चली आ रही थी। शंकर ने उसकी बेदाग जवानी और बेलाग़ जीवन को देखा था। उसका भरपूर यौवन वैधव्य-जीवन का थपेड़ा खाकर भी अपने डिगने की बात न सोच सका था।

शंकर दादा को पहले तो वह अच्छी लगती थी, फिर उसका यौवन अच्छा लगता था। विधवा होने के बाद वह उस पर तरस भी खाने लगा था। पर गुण्डे में जो मानवता का एक कण मात्र बच गया था वह इस पराई कुल की नारी के प्रति उसके मन में एक श्रेष्ठ भावना उत्पन्न करता रहता था।

नारी की दृष्टि से पुरुष का भाव छिपा नहीं रह सकता, और फिर शंकर दादा तो गुण्डा था। उसकी दृष्टि और लालसा पर किसी सभ्यता का आवरण नहीं था। फिर वह सोफ़िया की दृष्टि से कैसे बच सकता था? पर सोफ़िया को अपने जीवन पर विश्वास था, अपने आप पर विश्वास था। इसलिए इस बम्बई के मानव-जंगल में ही वह बनवास भोगकर अपना जीवन व्यतीत कर सकती थी। जाने यह सोफ़िया का विश्वास था या शंकर की मानवता, कि जब तक सोफ़िया का यौवन बना रहा, शंकर की लालसा तो बनी रही पर उसे प्रकट करने का साहस शंकर को कभी न हुआ और जब से सोफ़िया का यौवन तपस्या के इस जीवन में तप कर भस्म हो गया तब से शंकर की लालसा भी राख बनकर उड़ गई है। अब वह सोफ़िया से इस प्रकार मिलता है कि जैसे कोई भाई बहन से। और इसीलिए इस दादर के पीछे के मुहल्ले में कोई सोफ़िया से बोलता नहीं। शंकर की भट्टी के शराबी भी सोफ़िया के मकान के नीचे से

चुप-चाप गुज़र जाते हैं। झगड़ा-फ़साद करने पर सोफ़िया के हाथों शंकर की आबरू उतर जाती है। वह ठीक वहीं पर पहुँच जाती और उसके शराबी ग्राहकों के बीच में कहती—"साला शराबी! इधर शराब बनाता है, बेचता है। जण्टलमैन लोग का लाइफ़ मुश्किल कर दिया है। साला पुलिस वाला भी नहीं पूछता। हम पूछेगा। इधर तुम्हारा पिकेटिंग करेगा। देखेगा साला, इधर तुम शराबी लोग को कैसे अन्दर लेकर जाता है। साला गुण्डा, दादा बनता है।"

शंकर चुपचाप सोफ़िया की गालियाँ सहन कर लेता और सर उठाये उसकी ओर हतंबुद्धि-सा देखता रह जाता। फिर उठ कर भट्टी की बोतलें तोड़-ताड़ कर फेंक देता और फिर कहीं चला जाता। दो-चार दिन के बाद सोफ़िया फिर उसे समझा-बुझा कर ले आती और फिर वही भट्टी चलने लगती।

यशपाल कमरे के अन्दर कपड़े बदल रहा था और बाहर सोफ़िया बोले जा रही थी—

"शंकर दादा रात को सब शराबी और जुआरी के घर तुमको देख कर आया। अभी आकर तुम से पूछेगा—हम कौन है? हमको तुम कुछ चीज समझता ही नही। हमने 'ऐलीफेण्टा केव्ज़' नहीं देखा क्या····? बोलता है, जहाज मिस हो गया था। तुम जरूर उधर कोई गड़बड़ किया होगा, हम सब समझता है··· हाँ।"

अपने कमरे की डाईनिंग-टेबिल पर नाश्ता लगाते हुए भी सोफ़िया बोले जा रही थी—"अभी शंकर दादा आकर उठाकर तुमको नीचे फेंकेगा। तुम बदमाश हो गया है, तुम जरूर कोई लफड़ा करेगा।"

शंकर के नाम पर यशपाल जरा चौंक गया, क्योंकि उससे सारा मुहल्ला डरता था। कपड़े बदल कर जब वह बाहर आया तो बूढ़ी मैडम की आँखों में आँसू उमड़ रहे थे। पर सोफ़िया क्रोध के आवेश

में उनको दबाने की कोशिश कर रही थी। यशपाल को जल्दी थी, बैंक में अगर देर हो गई तो वहाँ भी डाँट पड़ेगी। पर सोफ़िया का नाश्ता छोड़ कर अगर चला गया तो रात को घर में घुसना मुश्किल हो जायगा। उसने सोफ़िया के कमरे में घुसते ही कहा—"मम्मी! तुम क्यों शोर मचाती हो, मैंने तुम्हें बता तो दिया। ऐलीफेण्टा-केव्ज़ गया था।"

सोफ़िया ने उसकी तरफ देखे बगैर कहा—"तुम्हारे साथ कौन थी?"

"वह…वह।" यशपाल जिस बात को छुपाना चाहता था उसको 'वह' शब्द से ही प्रगट कर गया।

सोफ़िया ने अब घूम कर देखा। उसकी आँखों के आँसू भी प्रगट हो गये। वह बोली—"यशपाल! तुम तीन बरस से इधर रहता है, कभी बाहर नहीं रहा। हमको तुम्हारे साथ लव हो गया है, हमको तुम्हारा ख्याल रहता है। तुम्हारा मम्मी इधर होता तो तुम उसकी 'परमीशन' लिये बिना इस तरह जा सकता था?"

यशपाल ने मैडम सोफ़िया की छाती पर अपना सर रख दिया—"मम्मी! मेरा ख्याल था कि मैं शाम को आ जाऊँगा, पर जहाज मिस हो गया, और मुझ से ज्यादा तो गोरी की मुसीबत होगी।"

"गोरी कौन?" मैडम ने प्रश्न किया।

"गोरी, वह गोरी……। मैं उससे शादी करने वाला हूँ।" यह कहते-कहते वह शरमा गया।

"वही लफड़ा! हम जानता था तुम कोई लफड़ा करेगा।"

"लफड़ा नहीं है। लव है।" यशपाल बोला।

"हम सब समझता है। आज कल का लड़की लोग अच्छा-अच्छा लड़का फँसाता है, उसको लूटता है और फिर तुमको फ्रस्ट्रेशन होगा।"

●

६

●

गोरी ने जब अपने घर का दरवाजा खटखटाया तो घड़ी आठ बाजा चुकी थी। अन्दर से आवाज आ रही थी।

"ऐसे कौतुक न देखे न सुने। जवान-जहान लड़की कल मुँह-अंधेरे घर से निकली, अभी तक उसका पता नहीं मैं कहती हूँ वह भाग गई अब यहाँ नहीं आयेगी।"

गोरी के चाचा चुप-चाप सुन रहे थे। उन्होंने दरवाजा खोला तो गोरी खड़ी थी। चाचा ने कहा—"लो आ गई! बिगड़ क्यों रही हो? अब वह दूध-पीती बच्ची थोड़े ही है जो उसे अच्छे-बुरे की पहचान नहीं है। क्यों, कहाँ थी तू बेटी?" चाचा ने स्नेहपूर्वक गोरी से पूछा।

गोरी ने अपना पर्स एक तरफ डाल दिया और दूसरे कमरे की ओर जाते हुए बोली—"ऐलीफेण्टा-केव्ज में जहाज न मिल सका इसलिए रात भर वहीं रहना पड़ा।"

चाचा ने अपनी पत्नी से कहा -"लो सुन लो! मैं कहता था न कि कोई आपत्ति आ गई होगी।"

चाची पंजे झाड़ कर पीछे पड़ गई। "आपत्ति तो तुम कहते हो। जैसा लड़की ने कहा वैसा तुमने मान लिया। यह साथ के फ्लैट में जो लोग रहते हैं क्या समझते होंगे?"

गोरी अन्दर स्क्रीन के पीछे कपड़े बदल रही थी। वह यह सब सुनकर क्रोध से अन्दर ही अन्दर जलने लगी।

"मैं कहती हूं तुम्हारी इस लाड़ली की कहीं आंख लड़ गई है। यह एक दिन सारे घर को डुबो देगी। मेरी अपनी जवान-जहान लड़की है, मुझे उसका ब्याह करना है। अब तुम इसका कोई ठिकाना कर दो, नहीं तो मैं अपना ठिकाना कर जाऊँगी।"

चाचा ने सिगरेट सुलगाते हुए धीरे से कहा—"अब चुप भी रहो। मैं उसे समझा दूंगा।"

"तुम क्या समझाओगे, खाक ? तुम तो औरतों की तरह चूड़ियाँ पहन कर बैठे हो। वह महीने के महीने पगार लाकर तुम्हारे हाथ में देती है ना। खुद कुछ करते-धरते नहीं। तुम्हारा मुंह उसे कुछ कहने को है ? आईना देखो, आईना।"

इस वाक्य पर चाचा का रंग भी जरा बदल गया। उन्होंने सिगरेट ऐशट्रे पर रखते हुए कहा—"उसका रुपया क्या मैं खा जाता हूँ ? इस घर में रहती है, खाती-पीती है। मुझे क्या मैं तो···।"

"अरे मैं तो क्या ?" उनकी पत्नी अधिक बरस पड़ी। "तुम्हें तो रेस और दूसरे धन्धों से ही फुरसत नहीं मिलती। मेरी बेटी का क्या होगा—मैं तो यही सोच-सोच कर मरी जा रही हूँ।"

गोरी ने कपड़े बदल कर जब इस कमरे में प्रवेश किया तो उसका चाचा गोरी को घूरने लगा, बोला—"तेरे कारण रोज मुझे बुरी-बुरी बातें सुनना पड़ती है। तू ऐसा काम क्यों करती है ?"

गोरी बोली—"मैंने आज तक जीवन में कोई ऐसा काम नहीं किया चाचा जी जिसके कारण मैं भाग जाऊं।" यह बात उसने चाची की ओर देख कर कही—"जिस दिन अन्जाने में कोई ऐसा अपराध

हो गया तो बम्बई में इतना बड़ा सागर सदा ठाठें मारता रहता है वहाँ सर छुपाने को बहुत जगह है। इस छत के नीचे नहीं आऊँगी।"

चाची उछल कर निकट आ गई, बोली—"लाडो रानी ! रात कहाँ झक मार के आई है ? तेरे मुख पर तेरे पाप की परछाई पड़ी हुई है। समुन्दर में डूब मरने को अब क्या कोई कसर है ?"

गोरी ने चाची की ओर देखा और स्तब्धता से देखती रह गई। उसने कहा—"मेरी माँ ने मरते समय कहा था, 'बेटी अनाथ आश्रम में चली जाना, पर चाचा के घर मत जाना, मैंने उनकी बात नहीं मानी, यह मेरा अपराध है।"

"तो क्यों आई थी तू यहाँ ? माँ की चिता में क्यों न जल गई ?" चाची ने हाथ नचाकर और अपनी गर्दन को कई बल देकर कहा।

गोरी बोली—"मैं तो नहीं आती थी, पर चाचा जी लेने गये थे इसीलिए आ गई। और अगर कहो तो अब चली जाऊँ।"

"हाँ हाँ, चली जा। अभी चली जा ?"

चाचा जी जन-मुरीद क़िस्म के आदमी तो न थे। पर इस समय उनकी परिस्थिति ऐसी नहीं थी कि वह अपनी पत्नी के सामने बोल सकते। वह गोरी को चुप कराने की चिन्ता करने लगे और पत्नी का हाथ पकड़ कर अन्दर दूसरे कमरे में ले गये।

अन्दर से पहले तो गाली-गलोज की आवाजें आती रहीं, फिर कुछ बर्तन-भांडे गिरने लगे और अन्त में चाची ने रो-रो कर सारा फ्लैट सर पर उठा लिया। जिस कमरे में वह रो रही थी उस कमरे के सामने वाले फ्लैट के लोग झाँकने लगे। चाचा ने खिड़कियाँ बन्द कीं, दरवाजे बन्द किये और फिर सर पकड़ कर बैठ गये।

गोरी जिस कमरे में खड़ी यह सब सुन रही थी, उस कमरे में चाचा और चाची की अपनी लड़की सुमित्रा बैठी नाश्ता कर रही थी। उसने घर के इस काण्ड की ओर ध्यान न दिया। माँ के रोने और गोरी के दुःख का उस पर कोई असर न हुआ। उसने पानी का गिलास पी कर और चाय की प्याली पर दूध की मलाई फैलाते हुए कहा—"दीदी तू रात को अकेली थी क्या ?"

गोरी ने क्रोध में आकर कहा—"नहीं।"

सुमित्रा—"नहीं, हाय !" कह कर गोरी के मुख की ओर देखने लगी। मलाई का भरा हुआ चमचा उसने चाट लिया और फिर बोली—"और कौन था ?" यह कह कर उसने मलाई का चटखारा लिया।

गोरी बोली—"जो था, वह शाम को यहीं आ जायगा, तुम भी देख लेना।" इतना कह कर बिना खाये-पिये दरवाजा खोल कर बाहर निकल गई।

●

७

●

यशपाल काउटण्र पर बैठा एकाउण्ट रजिस्टर में चेकों के नम्बर लिख रहा था। आज सोमवार था इसलिए रुपया निकालने वालों की काफी भीड़ थी। उसने टोकन एक आदमी की तरफ बढ़ाया कि काउण्टर की ओर उसे एक लड़की की साड़ी का पल्लू नज़र आया।

"यस मैडम।" खिड़की में से यशपाल ने झाँक कर कहा।

उस लड़की ने झुक कर खिड़की में झाँका तो यशपाल को गोरी नजर आई। गोरी आज मुस्कुराई नहीं। उसकी नीली आँखों में उदासी छा रही थी। उसके काले तिल का रंग कुछ फीका-सा पड़ गया था, बोली—"शाम को सात बजे यहाँ आ जाना।" और एक कार्ड उसकी ओर बढ़ा दिया।

कार्ड पर लिखा हुआ था, 'तीर्थराम कृष्णदास चोपड़ा, पुरानी बिल्डिग, दादर।' यशपाल ने कार्ड पढ़कर कहा—"ये कौन हैं ?"

पर गोरी पहले ही जा चुकी थी। उसने यशपाल की सम्पति की राह भी नहीं देखी।

यशपाल कार्ड लेकर काउण्टर से बाहर निकला किन्तु गोरी का कहीं पता न था।

बन्दूक वाला चपरासी जो बैंक के दरवाजे पर खड़ा था, उसने यशपाल को यों बदहवास देखा तो पूछा—"काय झाला साब ?"

"यहाँ एक लड़की थी।"

"वह चाँगली वाली ? छान छान ?"

"हाँ हाँ।"

"गेली।" (चली गई)

"किस तरफ ?"

"यह अपन नहीं देखा साब !"

इतने में मैनेजर अपने कैबिन से बाहर निकला। यशपाल ने मैनेजर को देखा तो झट उसकी दृष्टि से बच कर काउण्टर में घुस गया। मैनेजर सीधा काउण्टर के पास आ गया। उसके साथ एक आदमी भी था जिसकी तरफ इशारा करते हुए मैनेजर ने कहा—"यह मिस्टर, धरम सी० ऐण्ड को० के मैनेजिंग डायरेक्टर हैं। जरा इनका एकाउण्ट बता देना यशपाल !"

यशपाल ने रजिस्टर के पन्ने उलट-पुलट कर देखा और एक जगह रुक कर कहा—"पचहत्तर लाख अट्ठाईस हजार नौ सौ सत्तर रूपये, तीस पैसे।"

"एक कागज पर लिख देना।" मैनेजिंग डायरेक्टर ने कहा।

यशपाल ने चिट पर लिखा और चिट बढ़ा दी।

मैनेजिंग डायरेक्टर ने एक चेक बढ़ा दिया, पर वह मैनेजर से बातें करता हुआ उसके साथ कैबिन की ओर चला गया।

दो लाख रुपये का चेक था। यशपाल ने तीन बार रकम को पढ़ा फिर अपने हाथ में पकड़े हुए दो टोकनों को देखा और अंत में टोकन का नम्बर चेक पर लिखकर, चेक को काउण्टर बुक में रखा,

उसे चपरासी के हवाले नहीं किया, बल्कि स्वयं रजिस्टर लेकिन मैनेजर के कमरे में घुसा और चेक वाला रजिस्टर मैनेजर के सामने रख दिया और टोकन मैनेजर के हाथ में थमा दिया।

मैनेजिंग-डायरेक्टर गुजराती आदमी थे। वह टोकन देखकर चौंक पड़े —"टोकन ? शूँ—आ तारा पासे ?" (टोकन ? क्या—यह तुम्हारे पास था ?)

यशपाल ने कहा—"आपने लिया नहीं।"

मैनेजर ने ऐनक में से चेक की ओर देखा और हस्ताक्षर किया, फिर ऐनक उतार कर यशपाल की तरफ देखा। उसके मुँह से केवल इतना निकला—"गुड, वेरी गुड।"

पर यशपाल काम ज्यादा होने के कारण बाहर निकल गया था।

मैनेजिंग-डायरेक्टर बोले,"वहु ऑनेस्ट मानस छे। आ नु नाम शू छे।" (बहुत ईमानदार आदमी है। इनका नाम क्या है ?)

मैनेजर ने कहा—"यशपाल।"

"आने यश मलशे।"(इसको यश मिलेगा)

× × ×

मैनेजर ने कहा,—"हाँ, अवश्य मिलेगा।"

आज दोपहर को अन्नपूर्णा में गोरी से यशपाल की भेंट न हुई। उसने उसे ईरानी होटल में भी ढूँढा, पर वह आज वहाँ भी आई नहीं थी। यशपाल को बड़ी निराशा हुई—'शाम को क्यों बुलाया है ? बात क्या है ? जाना चाहिए या नहीं ?' इन सारी बातों का विचार उसके मन में आया, पर उसने अपने मन से कहा—'तू बड़ा घटिया है, जिससे प्यार करता है उसके बुलाने पर विचार करता है जाऊँ कि नहीं ? अरे ! प्रेम में विश्वास नहीं तो वह प्रेम नहीं है विष है।'

इतना सोच कर वह स्वयं अचम्भे में पड़ गया। 'अरे, मैं तो अब बिलकुल गोरी की तरह सोचने लगा हूँ। गोरी का मुझ पर कितना प्रभाव पड़ गया।'

उसने ईरानी होटल से गोरी के दफ्तर में फोन किया। पर गोरी छुट्टी लेकर जा चुकी थी। कुतूहल ने यशपाल के मन में कई उलट-फेर किये। शाम तक वह सोचता ही रहा। काम समाप्त कर के वह सीधा गोरी के यहाँ जाना चाहता था, पर घर में जाना आवश्यक है। मैडम फिर शंकर को ढूँढने भेज देगी। दूसरे, वह जरा कपड़े बदलना चाहता था। उसके पास एक नीली टाई है जिसे बाँध कर उसका डार्क-ब्ल्यु सूट खिल उठता है और यशपाल निखर आता है। आज वह बन-ठन कर जायगा। क्योंकि हो सकता है आज उसके नातेदारों को विवाह की बात ही करनी हो।

●

८

●

गोरी दफ्तर से छुट्टी लेकर घर आ गई अपने कमरे में धरती पर बिछे हुए बिछौने को उठा दिया जिस पर वह कल से विश्राम नहीं कर सकी थी। और फिर चटाई बिछा कर पड़ रही।

चाचा घर में थे नहीं। चाचा की बेटी किसी प्रायवेट कॉलेज में बारह बजे के बाद पढ़ने चली जाती थी। केवल चाची थी घर में। और उसने सवेरे के काण्ड के कारण गोरी की ओर ही नहीं देखा, बल्कि जब से गोरी घर में आई, वह भाँडे-बर्तन पटक कर दरवाजों को तीक्ष्णता से बन्द करके अपना क्रोध प्रगट करती रही।

दोपहर के बाद जो पहला व्यक्ति आया, वह थी सुमित्रा। चाची की एकलौती बेटी थी इसलिए उस पर न तो क्रोध आता था और न ऊँचे स्वर में वह उससे बात ही करती थी। और वैसे भी स्वर तो सदा बेटी का ही ऊँचा रहता। चाची ने बेटी को देख कर पूछा—'क्यों बेटी! आज जल्दी क्यों आ गई?"

सुमित्रा ने पूछा—"दीदी नहीं आई?"

माँ को दीदी के नाम पर आग ने पकड़ लिया बोली—"अन्दर कमरे में पड़ी रात की खुमारी उतार रही है।"

यह बात अन्दर गोरी ने भी सुनी, वह लेटी थी, उठकर बैठ गई।

सुमित्रा ने कहा, "अकेली आई थी क्या ?"

माँ चिढ़ गई—"और क्या मेरे घर में तमाशा साथ लेकर आती ?"

गोरी यह सुन कर फिर बेचैन हो उठी। उसका जी चाहा कि एक बार वह चाची के सामने आ खड़ी हो और किसी तरह अपने मन की भड़ास निकाल ले। वह एक बार उठी भी लेकिन किवाड़ के साथ सर लगा कर रो पड़ी।

चाची अभी तक बक-झक कर रही थी - "मेरे घर को तेरे बाप ने डेरा बना दिया है मैं भी घर को बदल कर रहूँगी। मेरी बेटी पर इस बात का अच्छा प्रभाव नहीं पड़ता। बड़ी कुलच्छनी है।" और परोसी हुई थाली लाकर सुमित्रा से बोली—"ले बेटी! यह थोड़ा सा भात ले ले।"

"नहीं मम्मी!" सुमित्रा बोली, "मुझे भूख नहीं।"

इतना कहकर भी उसके हाथ थाली की ओर बढ़ गये, वह जल्दी-जल्दी खाने लगी। चाची ने कहा,—"मजे से खा मजे से, मैं तुझे शक्कर और मलाई भी देती हूँ। मैं ने तेरे लिए ही चूल्हा जलाया है, नहीं तो उस कलमुँही के कारण आज मैं कुछ बनाने वाली नहीं थी।" यह कहते-कहते गोरी की चाची ने थाल में मक्खन भी डाल दिया।

सुमित्रा बिगड़ कर बोली—"यह मक्खन क्यों दिया मम्मी तुमने? मैं नहीं खाऊँगी। बुक में लिखा है मक्खन खाने से आदमी मोटा हो जाता है। क्लास की लड़कियाँ पहले ही से मुझे चिढ़ाती हैं नानसेन्स।"

माँ ने कहा—"आग लगे मुई ऐसी लड़कियों को जो मेरी बेटी को नजर लगाएँ। आँख न निकाल दूँ उनकी। तू खा बेटी—। और पुचकारने का शब्द निकाल कर फिर कहने लगी—"तू खा ले। बड़ी हो कर तू बिलकुल मेरी तरह हो जायगी। चिन्ता न कर।"

पर सुमित्रा थाली छोड़ कर उठ खड़ी हुई। गोरी दरवाजा बन्द किये पड़ी थी और सुमित्रा तो उसी से बातें करने आई थी, रात की वारदात पूछने क्या हुआ था रात को? और साथ कौन था उसके? वह भी उसे देखना चाहती थी जिसे रात भर गोरी देखती रही पर यह बात न वह माँ के सामने पूछ सकती थी और न गोरी ही उसे बता सकती थी।

फिर भी सुमित्रा माँ की आँख बचा कर अपने कमरे के उस कोरीडोर की ओर निकल गई जहाँ गोरी के कमरे की खिड़की खुलती थी। सुमित्रा का विचार था कि खिड़की से जा कर बातें करेगी परन्तु वह खिड़की भी निर्दयी के मन की तरह बन्द थी। उसने धीरे से खिड़की खटखटाई। पर अन्दर से कोई उत्तर न मिला। फिर उसने गोरी को पुकारा, मगर फिर भी वह निरुत्तर ही रही।

अन्त में उकता कर वह अपने कमरे की ओर चली गई। उसने अपने तकिये के नीचे से फिल्मी-हीरो की तस्वीरें निकालीं और उन्हें देखने लगी। वह सोचने लगी—कैसा होगा वह, गोरी का हीरो! उसकी सूरत किसके साथ मिलती होगी? राज कपूर के साथ! उँहूँ—राज कपूर की आँखें तो भूरी हैं, चेहरे का माँस भी ढलक गया है। दिलीप कुमार! ना-ना—उस पर भी बुढ़ापा छा रहा है। जवानी किधर है? राजेन्द्र कुमार? ओह—दो बच्चों का बाप, छी! छी!! प्रदीप कुमार? बोलना ही नहीं आता देखने को खूबसूरत है।

इस प्रकार उसने सारी तस्वीरों को रिजेक्ट कर दिया, लेकिन फिर भी वह उन तस्वीरों को लेकर गोरी के कमरे की ओर वढ़ी और धीरे-धीरे कहने लगी— "दीदी ! यह तस्वीरें देख कर किसी एक पर निशान लगा दो जिसके साथ उनकी सूरत मिलती हो।"

पर अन्दर से कोई उत्तर न मिला। तब उसने बन्द दरवाजे के नीचे से तस्वीरों का लिफाफा अन्दर खिसका दिया और प्रतीक्षा करने लगी। वह बहुत देर तक वहाँ खड़ी रही, किवाड़ हिलाती, खट-खटाती, खिड़की धकेलती, द्वार थपथपाती, गोरी को पुकारती पर गोरी का स्वर उसे नहीं मिला।

उसे अपनी मम्मी का भी डर था। वह नहीं चाहती थी कि उस के कारण गोरी को डाँट पड़े या गोरी के कारण वह ही डाँट खाये। अंत में उकता कर चली गई और अपने कमरे में जाकर ऊँचे स्वर में गाने लगी –

"हम बे-खुदी में उनको पुकारे चले गये।
सागिर में जिन्दगी को उतारे चले गये।"

फिल्मी वातावरण इस लड़की के कारण सारे घर पर छा गया।

गोरी अन्दर आँसू बहाती रही। चाचा दोपहर के बाद ही घर पर आकर रेस की किताबों की छान-फटक करने लगे। और चाची बाहर ड्राइङ्ग-रूम में टाँगें पसार कर सो गई और थोड़ी देर में लम्बे-लम्बे खर्राटे भरने लगीं।

× × ×

शाम के समय जब घर की घंटी बजी तो चाची जाग गई। और फर्श पर उठकर बैठ गई। उसने आँचल से मुँह साफ किया— "कौन है ?"

सुमित्रा ने अपने कमरे के अन्दर लेटे-ही-लेटे पूछा: "कौन है—?"

"जाने कौन आ मरा है—आराम भी नहीं करने देते।"

चाचा ने भी अपनी रेस की किताब को रखते हुए कहा—"अरे कौन है ?"

सब 'कौन है, कौन है' ही करते रहे। किसी ने दरवाजा खोलने की जिम्मेदारी नही समझी। आखिर हार चाचा की हुई। वही सिगरेट का कश खींचते हुए दरवाजे की ओर बढ़ गये।

सामने नीली टाई और डार्क रंग के सूट में एक नौजवान खड़ा था।

"यस ?" चाचा ने प्रश्न की दृष्टि से देखते हुए कहा।

नौजवान ने कार्ड बढ़ा दिया। – "तीर्थराम कृष्णदास चोपड़ा"

चाचा ने कहा—"तीर्थराम तो मैं हूं, कृष्णदास भगवान के घर चले गये आप किससे मिलना चाहते हैं ?"

"जी मैं मिलना नहीं चाहता, आपने मुझे बुलाया है ?"

"बुलाया है, मैंने ?" चोपड़ा साहब विस्मित से हो गये। "मैं क्यों बुलाऊंगा साहबजादे ?"

सुमित्रा किसी नौजवान की आवाज सुन कर ड्राइङ्ग-रूम में आ गई और उसे देखने लगी। चाची भी फटी-फटी आँखों से उसको भाँपती रही।

नौजवान ने कहा—"जी, यह कार्ड गोरी···।"

"गोरी।" सुमित्रा लपक कर आगे आ गई। "हाँ हाँ ! दीदी ने कहा था।"

"क्या कहा था ?" चाचा ने अपनी बेटी से पूछा।

"यह वह हैं डैडी। कम इन प्लीज ! हैव ए सीट !"

चाचा बात को समझे ही नहीं। चाची भी कुछ हैरान-सी होकर उठ खड़ी हुईं। सुमित्रा ने किसी की परवाह न करते हुए उसे ड्राइङ्ग रूम में सोफे पर बिठा दिया।

नौजवान के मन में कई विचार आ रहे थे—'यह कौन है ? गोरी ने क्या कहा ? प्यार की बात कह दी है या मुझे कहनी पड़ेगी ? मैं कैसे कहूंगा ?'

और चाचा सोचते थे—'यह लड़का गोरी ने बुलाया है। क्या घर वाली ठीक कहती है, गोरी का चाल-चलन अच्छा नहीं है। और अगर घरवाली को पता चल गया तो बड़ी छीछालेदर होगी।' चाचा हड़बड़ा गये थे।

सुमित्रा बड़े गौर से लड़के को देख रही थी—लड़का सुन्दर है, सचमुच ऐसा कोई हीरो फिल्मी दुनिया में नहीं। सुमित्रा ने पूछा—"आप किसी फिल्म-कम्पनी में काम करते हैं ?"

"जी ? नहीं। मैं तो…!" फिर उसने वाक्य बदल कर कहा—"आपने यह कैसे अन्दाजा लगाया ?"

"आपके बालों से। बिलकुल दिलीप कुमार की तरह माथे पर लट-सी पड़ी है।"

"जी नहीं ! यह तो यों ही आ गई होगी।" उसने हाथ से बालों की लट ठीक करते हुए कहा—"मैं तो बैंक में काम करता हूं।"

"बैंक में ?" सुमित्रा ने नाक सिकोड़ ली।

"बैंक में !" चाचा ने खुश होकर पास आकर बैठते हुए कहा—"अच्छा है, बहुत अच्छा है। बैंक में काम करने वाले आदमी ईमानदार होते हैं। नौकरी भी पक्की होती है।"

"जी हां।" लड़के ने कहा और फिर कुछ बनने की कोशिश करने लगा।

"वी काम्फर्टेवल।" सुमित्रा ने कहा—"गोरी अन्दर है। आप उससे मिलने आये हैं ना ?"

"जी—मैं तो······सच पूछिये तो मुझे पता नहीं, मैं तो गोरी से मिला भी नहीं, सिर्फ़ यह कार्ड मिला।"—यशपाल ने आज की बात का जिक्र किया।

"आप गोरी से नहीं मिले ?" सुमित्रा शरारत से हँसने लगी—"कल आप कहाँ थे ?"

"······जी मैं तो।" यशपाल सोच में पड़ गया—"बात क्या है ?" उसने विचार किया।

"ऐलीफेण्टा-केव्ज़ ? क्यों सच है ना ?" सुमित्रा ने इस तरह कहा जैसे उसने चोर को पकड़ लिया हो।

चाचा ने पूछा—"आपका नाम क्या है ?"

"यशपाल।" उसने जवाब दिया।

सुमित्रा ने हँसकर कहा—"वेरी गुड ! नाम भी फिल्मी नहीं है।"

चाचा ने बेटी की ओर देखा। वह कुछ कहना चाहते थे पर कह नहीं पाये। एकलौती लड़की का हर नखरा पूरा करना पड़ता है। फिर भी इतना बोले—"बेटी तू अन्दर जा। मैं इनसे बात करना चाहता हूँ।"

"मेरे सामने बात कीजिये ना। मैं सब जानती हूँ। दीदी ने मुझसे कहा था कि वे शाम को आयेंगे और ये आ गये।"

"देखिये।" चाचा ने अब यशपाल की तरफ़ घूम कर कहा—"गोरी मेरी भतीजी है।"

"भतीजी ? ओह हाँ।" यशपाल ने बात काटकर कहा—"जी हाँ ! मैं जानता हूँ। एक बार मैंने आपको देखा था, दादर स्टेशन पर। दूसरे दिन गोरी ने बताया था आप उसके चाचा हैं।"

बात के कट जाने से चाचा जरा बेचैन हो गये। उनको भी बहुत बातें करने की आदत थी, और उन्हें कोई सुनने वाला चाहिए था। घर में तो उनकी बात कोई सुनता ही नहीं। और यह लड़का भी बहुत बोले जा रहा है। चाचा ने कहा—"आपका मतलब क्या है, वह कहिये।"

"जी—मेरा मतलब तो···बात यह है कि···वह मैं कैसे कहूँ? मेरी बात ऐसी है जो कही नहीं जा सकती; आप समझ जाइये ना।"

सुमित्रा ठहाका मार कर हँस पड़ी और बोली—"वह तो हम सब समझते हैं उसे खोलने से क्या हासिल? यू आर इन लव।"

चाचा इस खुल्लमखुल्ला पर भौचक्के हो गये, मुँह खोले अपनी बेटी की ओर देखते रहे।

यशपाल शर्मा गया—क्या कहे? "यस बट वी बोथ।" इतना कहकर उसने सर झुका लिया।

सुमित्रा हँस कर बोली—"मैं चाय लाती हूँ।" और फिर पुकार कर बोली—"दीदी—दीदी। वह आ गये। भाई अब उठ भी चुको।"

चाची जो अब तक रसोई घर में चुप-चाप बैठी थीं, बिफर कर बाहर आ गईं—"कौन आ गया है? कौन है यह?"

सुमित्रा तो अन्दर चली गई थी। चाचा के लिए इस परिस्थिति को सँभालना मुश्किल हो गया। "अजी वह···मेरा मतलब है······।"

"अजी वह कौन? इस मरदुए का कोई नाम-पता भी है?"

चाचा एकदम नर्वस हो गये। "बात तो सुनो सुमित्रा की माँ! तुम समझती क्यों नहीं?"

"मेरा घर है या होटल?"

सुमित्रा ने जब माँ का स्वर सुना तो वह बाहर आ गई। बोली—"बड़ी पुरानी बातें करती हो मम्मी। यह हमारे गेस्ट हैं।"

"पर यह है कौन? बताती क्यों नहीं?" चाची अब बेटी पर भी बरस पड़ी और बेटी माँ की आवाज़ से दब गई।

वह चुप सी हो गई। मन में वह न जाने माँ को क्या कह रही होगी, पर ऊपर से चुप थी। उसे इस माडर्न गेस्ट के सामने अपनी माँ को मम्मी कहते हुए भी लज्जा आने लगी।

चाची ने फिर बोलना शुरू किया—"जो मरदुआ आता है उसे घर के अन्दर बैठा कर खुसुर-फुसुर करने लगते हैं। बुढ़ापे में मत मारी गई है।"

यशपाल बेचारा उठने के लिए पर तोलने लगा। जाने यह औरत अन्दर से कोई छूरी ही लाकर भोंक दे, नहीं तो शोर मचा कर सारा मुहल्ला ही इकट्ठा कर ले और मुझे पुलिस पकड़ कर ले जाय। क्या करे? वह सोचता हुआ उठा।

पर इतने में गोरी के कमरे का किवाड़ खट-से खुल गया और वह बोली—"चाची! मैं इनसे शादी करना चाहती हूँ।"

चाची इतना स्पष्ट उत्तर सुन कर सन्नाटे में आ गई। वह हत्-बुद्धि सी गोरी की ओर देखती रही। फिर धीरे-धीरे अन्दर चली गई।

चाचा ने यशपाल से कहा—"मैं कल आप से मिलूँगा। अब आप जाइये! बात यह है कि यह जरा···।" इसके आगे वह क्या कहें। पागल कहना नहीं चाहते थे, पत्नी है। और कोई शब्द उन्हें मिल नहीं रहा था। फिर बोले—"आप स्वयं समझ जाइये। बस मैं कल मिलूँगा।"

यशपाल गोरी की ओर बिना देखे ही चला गया।

* * *

"बात यह है बेटा कि मेरी दो लड़कियाँ हैं। एक मेरी और एक मेरे भाई की।" और तो मेरी कोई औलाद नहीं।

"लेकिन मेरे भाई साहब मरते वक्त मेरे लिए दो चीजें छोड़ गये थे, एक मेरी भतीजी गोरी और दूसरा अपना कर्जा। वह चाहते थे कि लड़की का व्याह करके मरें। पर वह यह भी चाहते थे कि पहले कर्जा उतार दें और फिर अपनी बेटी का व्याह करें।

"पर न व्याह किया न कर्जा उतारा। मरने से पहले मैंने उन्हें वचन दिया था कि मैं पहले कर्जा उतारूँगा फिर भतीजी का व्याह करूँगा और उसके बाद अपनी बेटी का व्याह करूँगा। पर आजकल तुम तो जानते ही हो, वेकारी बहुत फैल रही है। काम-धन्धा कुछ है नहीं। इसलिए मैं जरा परेशान-सा रहता हूँ, तुम ही बताओ क्या करूँ?" इतना कह कर चाचा चुप हो गये।

होटल के बैरे ने दो ठंडी काफी लाकर मेज पर रख दी और बाहर चला गया।

यशपाल ने कहा—"कर्जा कितना है?"

"अजी कोई ज्यादा नहीं, सिर्फ दस हजार रुपया।"

"सूद मिला कर या असल ही?"

चाचा इस प्रश्न के लिए तैयार न थे, बोले—"बैंक में काम करते हो ना! इसीलिए असल-सूद की वात जानते हो। जिसका कर्जा है वह भला आदमी है, अपना दोस्त ही है। वह सूद नहीं लेगा, असल से ही काम चल जायगा। मुझे अगर कोई कर्जा दे दे तो मैं उतार दूँ, फिर तुम्हारा व्याह हो जायगा और मैं गंगा नहाऊँगा। तुम मुझे कर्ज बैंक से दिला दो।"

यशपाल उछल पड़ा—"हाँ मैं फौरन दिला दूंगा, आपकी जायदाद कोई है ?"

"जायदाद ? मेरी पत्नी मेरी जायदाद है, और यह दो बेटियाँ हैं। बाकी सारा घर-बार तो देश के बंटवारे में चला गया। चार फैक्ट्रियाँ, चार कोठियाँ, चार बाग……।"

"यह सब चार चीजें क्यों थीं आपकी ?" यशपाल ने सवाल किया।

"हम चार भाई थे। ओफ्फोह……।" चाचा ने आह भरी।

"उसका क्लेम होगा आपके पास ?" यशपाल ने अपने सहारे के लिए नया प्रश्न किया।

"अजी नहीं। क्लेम नहीं कर सका, रिफ्यूजी-कार्ड ही नहीं बनवाया। बस यों ही परेशान घूमता रहा।" चाचा ने जेब टटोली और माचिस निकाल कर खटखटाने लगे।

यशपाल बोला—"मैं सिग्रेट नहीं पीता।"

"मैं पीता हूं बेटा पर गोल्ड-फ्लेक का डब्बा घर में ही रह गया।"

यशपाल ने गोल्ड-फ्लेक की डिबिया मंगवा दी और चाचा ने सिगरेट सुलगायी, फिर बोले—"बेटा तेरा ब्याह गोरी के बाप के कर्जे के नीचे दब रहा है। हिम्मत करो तो निकल आयेगा। लड़की को तो तुम जानते ही हो ?"

यशपाल विचार करते हुए बोला—"पर यह होगा कैसे ? बैंक वाले कर्जा तो देते हैं लेकिन गोल्ड पर, जायदाद पर। और तो मुश्किल है।"

"तो फिर बेटा ! विवाह भी मुश्किल है ।" कह कर चाचा जी ने एक आह भरी ।"

थोड़ी देर दोनों चुप रहे । चाचा फिर कहने लगे—"मैं कोशिश में हूँ देखो क्या होता है ? पर एक बात का तुम्हें वचन देना होगा ।"

"किस बात का ?" यशपाल ने हाथ आगे बढ़ा कर रहा ।

चाचा ने हाथ थाम लिया और भावनात्मक स्वर में बोले—"तुम गोरी को कभी दुःखी नहीं करोगे । और कर्ज की बात भी गोरी से नहीं करोगे, क्योंकि गोरी बड़ी खुद्दार लड़की है । उसको मैंने आज तक यह पता नहीं होने दिया कि मेरे भाई तुम्हें तो छोड़ गये साथ ही मेरे सर पर कर्जा भी ।"

"नहीं-नहीं, मैं नहीं बतलाऊँगा ।" यशपाल ने कहा और क्षण भर के बाद बोला—"मैं कोशिश करता हूँ, शायद पैसे का कोई इन्तजाम हो सके ।"

"प्रबन्ध तो हो ही जायगा, मैं जानता हूँ । इसी में तो प्यार की परख होती है, तुम्हारी भी परख हो जायगी ।"

इस परख की बात पर यशपाल के अभिमान को चोट लगी । उसने कहा—"अच्छा तो अवश्य ही कुछ करूँगा ।"

ब्वॉय ने बिल लाकर रख दिया । चाचा जी ने अपनी जेबें टटोलना शुरू किया, पहले रेस की किताबें निकालीं और फिर खाली बटुआ तलाश किया ।

खाली बटुआ निकालने से पहले ही यशपाल ने दस का नोट ब्वॉय की ट्रे में रख दिया ।

●

६

●

शनिवार का दिन था और सावन का महीना। बम्बई में आसमान से मूसलाधार पानी बरसता था; रास्तों पर नालों का गुमान होने लगा था। लोग छातों और बरसातियों में लिपटे-लिपटाये अपने-अपने घरों की ओर जा रहे थे। शाम हो चुकी थी, घड़ी की सूइयाँ गले मिल रही थीं। सड़कों पर अभी म्युनिसिपैलटी की बत्तियों ने अपना प्रकाश नहीं डाला था। यशपाल शीघ्रता से कदम उठाता हुआ उस फ्लैट की सीढ़ियाँ चढ़ गया, जहाँ गोरी रहती थी। उसका साँस फूल रहा था और वह चारों ओर देखता हुआ चल रहा था।

उसके कदम तेज़ थे। उसे देखकर ऐसा जान पड़ता था जैसे वह जो चाहता था उसे मिल गया है। या उसने अपने आपको जीवन की उस पगडंडी पर हांक दिया है जहाँ मृत्यु सदा ताक में लगी रहती है और या फिर उसकी दशा उस कुमारी की सी थी जिसका अस्तित्व सबकी नजर में महान् हो और वह अपनी दृष्टि में आज ही तुच्छ हो गया हो। वह उस अनब्याही दुल्हन की तरह से सिकुड़ रहा था जिसने सुहागरात देख ली हो।

फ्लैट का दरवाजा खुला था, उसने बाहर से पुकारा नहीं। घंटी

भी नहीं बजाई। सीधा कमरे में जा खड़ा हुआ। उसकी बरसाती से पानी की बूंदें टपक-टपक कर फर्श पर बदकिस्मत के आँसुओं की तरह बिखरने लगीं।

"चाचा जी।" खड़े होते ही यशपाल ने पुकारा।

"कौन है ?" अन्दर से चाची निकलीं।

"मैं ! चाची जी नमस्ते !"

यशपाल ने इस तरह कहा जैसे वह रोज ही इस घर में आता-जाता रहा है।

चाची ने भौवें सिकोड़ ली, माथे पर कई बल पड़ गये।

नमस्ते का जवाब तो उसने दिया नहीं, सिर्फ गुस्से में कहा—"वह घर पर नहीं हैं ?"

"कब आयेंगे ?"

"मैं क्या उनके काम की डायरी रखती हूँ ?" चाची स्वभाववश बिफर गईं।

यशपाल उसकी आवाज पर दबा नहीं, बोला—"उनका ही काम है। आयें तो गेस्ट-हाउस भेज देना। मैं उनकी राह देख रहा हूँ।" इतना कहकर उसने इधर-उधर देखे बिना ही दरवाजे की ओर बढ़ना शुरू किया। फिर पलट कर उसने एक बार देखा। गोरी के कमरे का दरवाजा बन्द था। गोरी घर में है या नहीं ? यह प्रश्न यशपाल के मन में उठना आवश्यक था, पर उठा नहीं। वह जीने से नीचे उतर गया। पानी धड़ाधड़ बरस रहा था। दरवाजे पर दुबका हुआ एक कुत्ता मुँह उठाकर यशपाल की तरफ देखने लगा और फिर जाने क्यों वह भों-भों भौंक पड़ा। यशपाल, जिसने गोरी की चाची के कटाक्ष का कोई जवाब न दिया था, वह कुत्ते का भी ध्यान किये बिना ही गली में निकल गया। उसके पास ही एक टैक्सी आकर

रुक गई और एक आदमी भाग कर उसी बिल्डिंग में दाखिल हुआ जहाँ से यशपाल निकल कर आया था। पानी की बौछार में इस आदमी को उसने पहचाना नहीं। फिर भी उसे शंका हुई कि कहीं गोरी के चाचा ही न हों। वह फिर दरवाजे की ओर लौट गया। कुत्ता फिर एक वार भौंका, लेकिन अन्दर से बिल्डिंग में प्रवेश करने वाले ने कुत्ते को डाँटा।

कुत्ते ने मुँह उठाकर डाँटने वाले को देखा और 'ऊँह-ऊँह' करते हुए उसकी तरफ बढ़ गया जैसे कोई शिकायत कर रहा हो।

यशपाल ने देखा और 'चाचा जी' कहते हुए उनके पास जा खड़ा हुआ।

पहले तो लम्बी बरसाती में लिपटे हुए आदमी को देख कर चोपड़ा साहब पहचान न सके क्योंकि बरसाती के कालर खड़े थे और बरसात में भीगे हुए लम्बे-लम्बे बाल उसके माथे को छुपाये हुए थे।

फिर चाचा जी ने पहचान कर कहा—"कौन ? यशपाल।"

"जी-हाँ। मैं आपको ढूँढ़ने आया था।"

"घर में—? यह तुमने अच्छा न किया, घर में तुम्हारा मिलना······।"

अभी इतना ही कह पाये थे कि सीढ़ियों पर से किसी के घड़ा-धड़ उतरने की आवाज आने लगी और चाचा जी चाची जी के भय से यशपाल का हाथ पकड़ कर अँधेरे में गायब हो गये।

× × ×

यशपाल के जाने के बाद चाची ने फिर गोरी की खबर ली।

"पाप की धूल बाहर ही झाड़ कर आया कर। यह राख पल्ले बाँधकर मेरे घर में क्यों लाने लगी है कलंकिनी ?"

गोरी की समझ में चाची की बात आ गई। परन्तु यह घर-बाहर का भेद वह न जान सकी।

सुमित्रा आईस-क्रीम खा रही थी। बोली—"माँ ! तुम तो यों ही दीदी पर खफा होती हो। बरसाती वाला हीरो दीदी से थोड़े ही मिलने आया था, वह तो डैडी से मिलना चाहता था।"

गोरी रोने की-सी हो गई। सुमित्रा का कटाक्ष उसके हृदय में बाण की तरह लगा। वह ड्राइङ्ग रूम से उठकर अपने कमरे में चली गई। पर वहाँ रोई नहीं; उसको गुस्सा आ रहा था—'यशपाल बिना गोरी को बताये आज फिर घर में घुस आया।' मगर फिर उसे ध्यान आया कि वह प्रेम जो करता है। मैं कई दिनों से उसे नहीं मिली, इसलिए मुझे देखने आया होगा लेकिन सुमित्रा तो कहती है वह चाचा जी को पूछ रहा था।

'यह उसका बहाना था।' यह सोचते-सोचते उसकी निर्जल आँखें सजल हो गईं, पर विचारों ने उसे रोने नहीं दिया क्योंकि विचार-धारा अश्रु-धारा को रोक देती है। विचार एक कर्म है, और कर्म मनुष्य को दर्द से छुटकारा दिला देता है।

गोरी अपने विस्तर पर उठकर बैठ गई। उसके कमरे में अब तक अँधेरा था। खिड़की पर बरसात लगातार दस्तक दे रही थी और बाहर कई बार बिजली जोर से कड़क चुकी थी और खिड़की के शीशों से उसका प्रकाश कई बार चमक कर लोप हो चुका था।

●

१०

●

"सुमित्रा"—बाहर से चाचा जी ने ड्राइङ्ग-रूम में प्रवेश करते हुए रात के बारह बजे अपनी बेटी को पुकारा।

किन्तु उत्तर में किसी की आवाज न आई।

फिर चाचा जी ने कहा—"अरे! सब सो गये क्या ?"

बरसात के शोर में उनका यह वाक्य भी घुल गया। चोपड़ा साहब ने स्वयं बत्ती जलाई, और गोरी कमरे का दरवाजा खोल कर बाहर आ गई।

"तुम्हारी चाची सो गई हैं क्या ?"

गोरी ने कोई उत्तर नहीं दिया। आज वह यह सब बातें छोड़ कर अपने चाचा से अपने बारे में कुछ कहना चाहती थी। और इस समय जब वातावरण शान्त था और करीब बैठे आदमी की आवाज भी ध्यान देने पर ही कान में पड़ सकती थी तो इस शान्ति का लाभ उठाकर गोरी अशान्त हो जाना चाहती थी। उसने एक बार चाची के कमरे में झाँका जहाँ सुमित्रा भी सो रही थी। वहाँ अँधेरा था, उसने रसोई-घर में प्रवेश किया।

चाचा जी कपड़े बदलने लगे।

गोरी ने खाना गर्म करके चाचा जी के सामने लाकर रख दिया।

"खाना तो मैं खा आया हूँ।"—फिर धीरे से बोले—"यशपाल के साथ ही खाया था। उसके गेस्ट-हाऊस में ही। गेस्ट-हाऊस की जो मालिक है ना—मैडम सोफ़िया, बड़ी अच्छी औरत है बेटी! वह तो यशपाल को बेटे की तरह ही प्यार करती है।"

गोरी चाचा के पास ही फर्श पर बैठ गई और अपनी उँगली से फर्श पर लकीरें डालने लगी।

चाचा जी ने इधर-उधर झाँका, फिर धीरे से बोले—"मैंने तेरी शादी यशपाल से तय कर दी है।"

गोरी ने चौंक कर चाचा की ओर देखा कि कहीं वह छेड़ तो नहीं कर रहे हैं। चोपड़ा साहब ने नजरें झुका लीं, वह गोरी की दृष्टि का सामना न कर सके, जाने क्यों?

थोड़ी देर कमरे में स्तब्धता रही।

गोरी लज्जा के मारे सर झुकाये शिथिल-सी बैठी रही। ऐसे समाचार पर लड़कियों को सहारे की आवश्यकता होती है—क्यों? इसका पता नहीं। जिस तरह डोली में उठा कर बिठाने के लिए मामा की आवश्यकता होती है, ऐसे ही व्याह के समाचार के बाद सहेलियों की जरूरत पड़ती है जो सहारा देकर लड़की को सब के बीच से उठा कर ले जाती हैं और अपनी छेड़-छाड़ से दुल्हन के मन में प्रेम के कई फूल खिला देती हैं। पर गोरी को सँभालने के लिए कोई सहेली न आई, किसी ने सहारा न दिया; सिर्फ चाची हड़बड़ा कर बाहर निकल आईं और बोलीं—

"ब्याह तय कर दिया, बहुत अच्छा किया। अब जल्दी से इस गुणों की पोटली को मेरे घर से बिदा करो। मैं हाथ जोड़ती हूँ। मेरी जवान-जहान बेटी पर अगर इसका साया पड़ गया तो मैं अपने मैके वालों को मुँह दिखाने के लायक न रहूँगी। सुमित्रा के मामा तुम्हारा भी खून कर देंगे, मेरा भी, और मेरी बेटी का तो गला ही घोंट देंगे।"

चाचा जी ने आज जरा बिगड़े हुए तेवर से घरवाली को देखकर कहा—"तुम कभी भी तो चुप रहा करो। सुमित्रा मेरी बेटी है। यह तो मेरे उस भाई की बेटी है जो इस संसार में नहीं है। तुम्हारी इज्जत है तो मेरी भी है। और मैं पूछता हूँ यशपाल में बुराई क्या है ? कमाता है, खाता है, खूबसूरत है। मैं तो सुमित्रा के लिए भी ऐसा ही वर ढूँढूँगा।"

"तुम ढूँढ चुके।" कहकर चाची ने हाथ जोड़ दिये। और फिर अन्दर चली गईं।

गोरी भी धीरे-धीरे उठ कर अपने कमरे में जा छुपी। वह फूट-फूट कर रोने लगी और न जाने कब रोते-रोते सो गई। आज उसे माँ याद आ रही थी। उसे अपने बाबूजी याद आ रहे थे, जिन्हें इस ब्याह में खुशी होती। पर उसका मन चाचा जी के फैसले से कृत-कृत्य हो गया था और इस रुलाई के पीछे शायद यही भावना थी।

* * *

दूसरे दिन गोरी ने अपनी नौकरी से स्तीफा दे दिया। अब उसे नौकरी की जरूरत नहीं थी, वह किस लिए काम करेगी, पैसे के

लिए ? नहीं · वह अब गृहणी बनेगी और यशपाल की आमदनी से घर चलायेगी सुघड़ता से ।

मैनेजर ने उसके स्तीफ़े को पढ़ कर एक तरफ़ रखते हुए कहा—"सरकार कहती है लड़कियों को दफ्तर में नौकर रखा जाये, पर यह लड़कियां ब्याह से पहले तो नौकरी ठीक-ठीक करती हैं, किन्तु इनके जीवन में उलट-फेर होते ही वह काम मे भी उलट-फेर करने लगती हैं, अब क्या किया जाय ?"

गौरी का स्तीफा मंजूर हो गया और उसे उसके वेतन के साथ प्रॉविडेण्ट-फण्ड के भी दो हजार रुपये मिले। दो हजार रुपये ले जाकर गोरी ने चाचा जी के चरणों पर रख दिये।

चोपड़ा साहब ने नोट देखे तो मुँह में पानी भर आया। उन्होंने गौरी के शीश पर हाथ रख कर आशीर्वाद देते हुए कहा—"बेटी आज तूने मेरी चिन्ता दूर कर दी। मैं सोच रहा था कि तेरी शादी के लिए पैसे कहाँ से आयेंगे ।" और फिर अपनी पत्नी की ओर देखने लगे। बीच-बीच में नोटों पर भी दृष्टि डाल लेते थे। फिर कहने लगे—"मैं यह सारे रुपये तेरे व्याह पर खर्च करूँगा । अपने पास एक पाई तक न रखूँगा।

चाचा जी की आँखें जाने आज क्यों भर आईं। फिर कड़क कर बोलीं—"बेटी-बेटी कहते तुम्हारा मुँह नहीं सूखता और विदाई पर उसके रुपये खर्च करोगे। तुम्हारी अकल तो ठिकाने है ।" इतना कह कर उसने सारे नोट उठाकर गोरी के आंचल में बांध दिये और बोली

—"इनमें से अगर एक पैसा भी तुमने खर्च किया तो भगवान की फटकार पड़ेगी। तुम रुपये का इन्तजाम नहीं कर सकते तो मेरे यह कंगन बेच कर व्याह पर लगा दो।" इतना कह कर उसने कंगन उतार कर चाचा के सामने डाल दिये।

सुमित्रा बोली—"तुम दोनों बड़े ऑर्थोडॉक्स हो। मैरेज पर खर्च ही क्या होता है? लड़के के दोस्त आयेंगे, एक-एक कोको कोला, एक-दो आईसक्रीम···और टा—टा, बॉय, बॉय।

चाचा जी को सुमित्रा की बात पसन्द आई। चाची के विरोध पर गोरी ने धीरे से कहा—"सुमित्रा सच कहती है। मैं अपना बोझ आप पर डालना नहीं चाहती।"

चाची और चाचा दोनों गोरी का मुँह ताकने लगे जो चुप-चाप जमीन की ओर देख रही थी।

●

११

●

आज जब पुलिस ने आकर गोरी के सातवें फेरे में बाधा डाली और यशपाल गोरी से दामन छुड़ा कर भाग गया तो विवाह की वेदी और जलती हुई अग्नि के सामने हाथ जोड़े खडी हुई गोरी जमीन की ओर नहीं आकाश की ओर देखने लगी।

चाचा ने आगे बढ़कर पुलिस से पूछा—"यशपाल ने क्या किया है ?"

"उसने बैंक में दस हजार रुपये का फ्रॉड किया है।"

चाचा दस हजार का फ्रॉड सुनकर गश खा गये।

सुमित्रा "माई गॉड" कह कर गोरी की तरफ देखने लगी।

चाची जैसे फट पड़ीं—"और लड़का ढूँढ—और अपनी मर्जी से व्याह कर। अब जीवन भर तू तड़पती रहेगी और वह जेल में सड़ता रहेगा। मनमानी करने वालों की यही हालत होती है।" और फिर वह रोने लगीं—"हाय-हाय मेरी बेटी" कह कर सर पीटने लगीं।

गोरी की आंखों में आग के शोले से उठने लगे। होठ मौन थे, मौन ही रहे। वह कुछ बोली नहीं किन्तु उसका रोम-रोम अपने विश्वास

के टूट जाने पर विह्वल हो उठा। उसके मन में यह प्रश्न उठने लगा—'क्या यशपाल अपराधी है ? क्या मैंने एक गुनहगार से प्यार किया है ? क्या मैंने गुनाह किया है ?'

चंचल चित्त ने उस पर कई आरोप लगाये। मन ने तड़प कर केवल प्यार की दुहाई दी और शरीर आंतरिक वेदना के कारण शून्यवत् स्तब्ध हो, निश्चल ही रहा।

पुलिस ने कोना-कोना छान मारा लेकिन उसे यशपाल न मिला। वह कहाँ गया ?

जब पुलिस यशपाल को खोज रही थी, उस समय मैडम सोफ़िया को और तो कुछ सूझा नहीं, पुलिस इन्सपेक्टर को पकड़ कर बोली— "तुम कैसा पुलिस वाला है, आदमी को समझता नहीं, पहचानता नहीं, और उसको पकड़ता है। बोलता है फ्रॉड करता है। जानता है, वह कौन है ?"

पुलिस इन्सपेक्टर सोफ़िया की बात का मतलब तो समझता था, लेकिन एक ईसाई औरत एक हिन्दू लड़के के लिए यों आस्तीनें चढ़ा कर भिड़ जाने को तैयार हो गई है, इसका कारण क्या है ? यह कौन है ? शायद इसी से कुछ खोज लगे। वह बोला—"हाँ मैं उसे नही जानता, लेकिन मेरा ख्याल है तुम जानती हो ?"

मैडम बोली—"ही इज़ माई सन !" (वह मेरा लड़का है।) और साथ ही रो पड़ी।

"सन् !" इन्सपेक्टर चौंका।

"यस, यस, दि ओनली सन ऑफ एविडो !" (हाँ, हाँ एक विधवा का एक मात्र पुत्र)।

इन्सपेक्टर की समझ में बिल्कुल ही कुछ नहीं आया। औरत ईसाई, बेटा हिन्दू। वह बेटा कैसे हो गया ?

"तुम नहीं जानता; हमारे पेट का बच्चा हमको इतना प्यारा न होता जितना यह है। वह अच्छा आदमी है, बच्चा है, समझता कुछ नहीं। किसी दूसरे ने फ्रॉड किया होगा, इसका नाम लगा दिया। और देखो, कैसे वक्त पर तुम इधर आया, उसका शादी बनता था। तुम पुलिस वाला है, डेविल भी ऐसा काम नहीं करता। तुम कैसा आदमी है ?"

पुलिस इन्सपेक्टर जो सिपाहियों का इन्तज़ार कर रहा था अपने जेब से कापी निकाल कर बोला—"ड्यूटी करना आदमी का पहला काम होता है मैडम।"

"यस, तुम ठीक बोला। हमारा तो बेटा है हमको तो बुरा लगेगा, तुम ठीक बोला।" और आँसू पोंछते हुए बोली—"हमारा बेड-लक ! अब हम उसको किधर भी नहीं ढूँढने सकेगा।"

"तुम रहती कहाँ हो मैडम ?" इन्सपेक्टर ने सवाल किया।

सोफ़िया ने अपना पता बता दिया और बोली—"अगर तुमको मिला तो हमको भी ख़बर देना। हम आकर उसको ठीक करेगा। उसको ऐसा 'पनिश' करेगा कि वह 'लाइफ़ टाइम' नहीं भूलेगा।"

इन्सपेक्टर ने कहा—"अगर वह तुम्हारे घर आये तो···" इतना ही कह कर इन्सपेक्टर मैडम के मुख पर उसके मन के भाव का प्रकाश देखने के लिए चुप हो गया।

मैडम सोफ़िया के चेहरे पर एक सुर्ख़ लहर दौड़ गई, फिर धीरे-धीरे चेहरा पीला होने लगा—"वह आयेगा ? क्या तुम्हें श्योर (Sure) है, वह हमारे घर आयेगा, हमारा पास आयेगा ?"

इन्सपेक्टर ने कहा—"बच्चा मुसीबत में माँ के पास ही आता है। मैडम, वह भाग कर जायगा कहाँ ? तुम्हारे ही घर गया होगा ?"

"मेरे घर ?" मैडम यह सुन कर रुक न सकी, और भागी—"शंकर···शंकर दादा।" पुकारती हुई वह जीने से नीचे उतर गई। उसकी चाल में ऐसी तेजी थी जैसे वह गाड़ी पकड़ना चाहती हो, उस जिन्दगी की गाड़ी जो उसे एक उजाड़ और वीरान स्टेशन पर छोड़ गई हो। अब वह उसे पकड़ेगी और जहाँ उसको जाना है चली जायगी।

शंकर दादा का कहीं पता न था। गली की नुक्कड़ पर शंकर दादा का एक आदमी खड़ा पुलिस को देख रहा था, और वहाँ कोई नहीं था। सोफिया उस आदमी के पास से तेज़ी से गुजर गई।

* * *

मैडम सोफ़िया जब अपने घर पहुँची तो वहाँ यशपाल नहीं था। गेस्ट हाउस के दूसरे गेस्ट भी नहीं थे। सिर्फ़ सोफिया की नौकरानी बैठी रो रही थी।

पुलिस घर की तलाशी लेकर जा चुकी थी। सारा सामान उलट-पुलट हो गया था। पुलिस का ख्याल था, अगर यशपाल यहाँ नहीं है तो माल जरूर होगा। मगर माल भी न मिला और यशपाल का भी पता न चला।

सोफ़िया ने नौकरानी की ओर देखा, पर कुछ बोली नहीं। वह अपने कमरे मे चली गई और वहाँ भी उजड़ा-लुटा हुआ देखकर बेक़ाबू हो गई। वह बाहर आ गई और नौकरानी को डाँट कर बोली—"तुम काहे को रोता है ? क्या हुआ तुमको ? तुम्हारा कौन मरा है ?" मैडम की वेदना ने एक नया रूप धारण कर लिया।

नौकरानी ने रोते हुए कहा—"यशपाल······।"

"मर···।" मैडम चीख कर बोली—"यशपाल ! तुम उस हिन्दू

के लिए काए को रोता है, वह हमारा क़ौन था ? कौन था ? कोई नहीं था।" इतना कहते-कहते वह ऊपर भाग गई।

और ऊपर जाकर वह फर्श पर लेट गई।

रात के कोई दो बजे होंगे जब किसी ने दरवाज़े पर दस्तक दी। मैडम सोफ़िया रोते-रोते बे-हाल हो चुकी थीं। वह चौंक गईं और पूछा—"कौन है ?"

बाहर से जबाब न आया, मगर दरवाजे पर फिर खटका हुआ।

मैडम के मन में यशपाल का भरम उठ खड़ा हुआ। 'क्या यशपाल आ गया जिसके पीछे पुलिस लगी हुई है ?'

उसने दरवाज़ा खोल दिया और यशपाल के लिए अपनी गोदी फैला दी। मगर बाहर अँधेरे में शंकर दादा खड़ा था। शंकर ने अपने चारों ओर देखा. फिर कमरे में प्रवेश करके अपने पीछे दरवाज़ा बन्द कर दिया।

सोफ़िया ने प्रश्नार्थक दृष्टि से शंकर की ओर देखा। शंकर ने कहा—"पुलिस यशपाल को सात जनम में भी नहीं पकड़ सकती। तुम चिन्ता मत करो, हम सब बन्दोबस्त कर आया है।"

सोफ़िया ने उसकी बात तो सुनी नहीं, वह अपने मन की बात कहने लगी—"यशपाल ने फ्रॉड नहीं किया शंकर !"

शंकर बोला—"कियेला है, कियेला।"

"किया है ?" सोफ़िया सिटपिटा गई। "तुम झूठ बोलता, वह भोला-भाला है। कैसे करने सकेगा ?"

"उसने कियेला है।" शंकर ने अपनी बात पर ज़ोर दिया।

"तो तुम्हारी संगत में किया होगा। तुमने ही उसको समझाया होगा। यू गुण्डा ! तुम उसके कमरे में आकर उसके साथ रहकर कान्स्प्रसी (Conspiracy) करता था।"

"तुम बड़ा लफ़ड़ा करता है, मैडम ! शोर मचाता है। बाहर पुलिस वाला खड़ेला है। हम तुमको खबर देने आया कि यशपाल हमारे पास है।"

मैडम सोफ़िया थोड़ी देर उसकी तरफ़ देखती रही, फिर उसी के सीने पर सर रखकर रो पड़ी। शंकर ने उसके सर पर हाथ रख कर कहा—"मैडम तुम रोता किस लिए है ? उसको कोई नहीं पकड़ सकेगा।"

"कब तक नहीं पकड़ा जायगा।" सोफ़िया बोली।

"जब तक हम जियेगा, वह मौज करेगा। वह हमारा बेटा है, तुम्हारा बेटा है। हम उसकी रक्षा करेगा, हम भवानी माँ का सौगन्ध खाता है। हम मराठा है, तुम विश्वास करो।"

मैडम सोफ़िया रोती रही। उसकी हिचकी बँध गई।

●

१२

●

बम्बई में रात के आखिरी पहर में जब मूसलाधार पानी पड़ रहा था, मरोल पुलिस स्टेशन के पीछे जहाँ गरीबों की झोपड़ियाँ हैं, वहाँ की एक झोपड़ी से लालटेन लेकर बाहर निकलते हुए शंकर दादा ने जोर से पुकारा—

"अरे हे चौकीदार !···ओ चौकीदार !!"

"काय आहे ?" दूसरी तरफ़ से एक आवाज ने उत्तर दिया।

"या इकड़े या।"

और दूर पेड़ के नीचे से चौकीदार ने टार्च की रोशनी शंकर दादा के मुँह पर मारी, और फ़िर अपने ऊपर बोरी की बरसाती ओढ़े हुए पेड़ के नीचे से बाहर निकल आया।

थोड़ी देर में वह शंकर के पास आ खड़ा हुआ, अपनी बोरी उतार कर उसने शंकर के हाथ में दे दी और अन्दर चला गया।

अन्दर मैडम सोफ़िया एकटक दरवाजे की ओर देख रही थी। वह उस मराठे को देखकर स्तब्ध रह गई और फिर चौकीदार से लिपट गई। "मेरा बेटा···मेरा यशपाल ! यह तुमने कैसा कपड़ा पहना है ?"

यशपाल ने कहा—"पुलिस से बचने के लिए मैंने ऐसा किया है

मम्मी ! शंकर दादा ने यह कपड़ा पहना दिया। किसी को पता नहीं चलता कि मैं यशपाल हूँ कि चौकीदार ! पुलिस के सिपाही मेरे करीब से गुजरते रहते हैं और कोई नहीं पहचान सकता।"

यशपाल ने बड़े गर्व से अपनी कीर्ति का बखान किया।

सोफ़िया ने उसके चेहरे को अपने हाथों में लेते हुए कहा—"सन ! तुमने ऐसा नहीं किया, जो पुलिस लोग बोलता है ना ?"

यशपाल इस प्रश्न के लिए तैयार न था। वह थोड़ी देर सोफ़िया को देखता रहा और फिर अपना सर झुका लिया। बाहर पानी जोर से बरस रहा था। जिस झोपड़ी में वे लोग खड़े थे उसकी छत पर पानी बड़े ज़ोर-शोर के साथ प्रहार कर रहा था। कभी-कभी इन दोनों की आवाज़ पानी के शोर में डूब जाती थी। सोफ़िया ने यशपाल को झंझोड़ कर कहा—"बोलो, तुमने बैंक में फ्रॉड किया जहाँ से तुमको रोटी मिलता था ? तुम उधर फ्रॉड किया होता ?"

"नहीं ! मैंने बैंक का रुपया नहीं लिया मम्मी ! वह रुपया धरमसी एण्ड कम्पनी का था। उसका मैनेजिंग डायरेक्टर मुझे एक चेक कैश करवाने के लिए दे गया था। वह पचास हजार का चेक था। चेक काटते हुए उसने दो चेक फाड़ कर दे दिये। उसे पता नहीं चला। वह जल्दी में था। चला गया।

"नीचे के चेक पर भी दस्तखत थे मम्मी ! वह पचास हज़ार कैश बैंक बन्द होने के बाद आकर ले गया। लेकिन वह नीचे वाला चेक मैंने दस हज़ार लिख कर कैश करवा लिया। वह बैंक का रुपया नहीं था।"

शंकर ने खुश होकर कहा—"अरे तब तो पुलिस तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ सकता। तुम बोलो हमने कैश धरमसी को दे दिया था, वही हमको दो चेक देकर गया था।"

यशपाल बोला—"लेकिन मैंने दिया नहीं, यह झूठ है।"

"तो तुमने इतना बिग एमाउण्ट क्या किया ? किसको दिया ?" मैडम ने पूछा।

यशपाल इस बात पर चुप हो गया, वह क्या कहे ? क्या न कहे ?

सोफ़िया ने उसके सर पर हाथ फिरा कर कहा—"बेटा। हमको बता दो, हम तुम्हारा मम्मी है।"

लेकिन यशपाल फिर भी चुप ही रहा। उसने अति करुण दृष्टि से मैडम की ओर देखा, जैसे कह रहा हो, 'मम्मी, यह मत पूछो—मत पूछो।'

थोड़ी देर कमरे में स्तब्धता रही, सिर्फ बरसात की रात बाहर चीखती रही। आखिर शंकर ने इस मौन को तोड़ा, और बोला—"हमको बताओ वह रुपया किधर है ? वह पुलिस का बाप नहीं ले सकता।"

यशपाल फिर भी मौन रहा।

तब सोफ़िया ने यशपाल को गिरेबान से पकड़ कर झंझोड़ा और गुस्से में बोली—"बोलो, बोलो, रुपया किधर है ? कहाँ है ?"

इतने में करीब से किसी के पाँव की आवाज़ सुनाई दी, जैसे चार-पाँच व्यक्ति अपने भारी बूटों से पानी में से संभल-संभल कर गुज़र रहे हों।

शंकर दादा ने कहा—"कोई है।"

उसके इन शब्दों के साथ ही पुलिस की सीटी बज उठी। शंकर यशपाल का हाथ पकड़ कर बाहर बरसात में भीगी हुई रात के अँधेरे में अलोप हो गया।

सोफ़िया अँधेरे में ही खड़ी रह गई।

फिर वही पुलिस इन्सपेक्टर सिपाहियों के साथ अन्दर दाखिल हुआ।

"कहाँ गया ?" इन्सपेक्टर ने सोफ़िया से पूछा।

सोफ़िया कुछ बोली नहीं, सिर्फ़ इन्सपेक्टर की तरफ़ देखती रही।

सिपाहियों ने चारों तरफ़ टार्च की रोशनी डाल कर देखा और एक सिपाही बोला—"भाग गया साला।"

इन्सपेक्टर बाहर निकल गया और सोफ़िया झोपड़ी की कीचड़ में धम्म से गिर पड़ी। उसके हाथ में ममता की वेदना के अतिरिक्त कुछ भी नही आया।

●

१३

●

पुलिस यशपाल को ढूंढती रही। उसके वारण्ट सब पुलिस स्टेशनों में चक्कर काटते रहे। अखबारों ने उसके फरार होने की खबर छापी, और कई एक ने तो उसकी मृत्यु का समाचार भी छाप दिया। और कई रिपोर्टरों को वह चलता-फिरता भी दिखाई देता रहा। एक अखबार ने तो यह भी लिखा कि वह इस संसार में नहीं है और अपनी इस बात को सिद्ध करने के लिए उसने उसकी तस्वीर छापी, जो विहार-लेक के पास ली गई थी। वह चित्र यशपाल के कपड़ों का था जो किनारे पर मिले। पुलिस यशपाल का शव ढूंढती रही पर न मिला; क्योंकि उस तालाब में मगरमच्छ रहते हैं, इसलिए यह माना गया कि यशपाल, जो गोरी का दूल्हा था, किसी मगरमच्छ के भूखे पेट का ग्रास बन गया।

गोरी ने जब यह खबर सुनी तो वह मूर्छित होकर गिर पड़ी। चाची को आज उस पर बड़ी दया आई, उसने गोरी को उठा कर अपनी छाती से लगा लिया और बोली—"बेटी जो होना था हो गया। अब उस पर इतना शोक मत कर।"

चाचा जी भी पास ही बैठे थे। उन्होंने खिड़की के बाहर देखते हुए कहा—"तुम्हें तो भगवान का शुक्रिया अदा करना चाहिए कि

उसने बड़े मौके पर बात को खोल दिया। तेरी बिदाई नहीं हुई थी। अगर तेरी बिदाई हो जाती तो क्या होता ? मैं तो यही-यही सोचकर पागल हो रहा हूं। अभी तो कुछ बिगड़ा नहीं। मैं बहुत अच्छा वर ढूँढ़कर तेरा विवाह कर दूँगा।"

गोरी ने चाचा की ओर रुष्ट दृष्टि से देखा और बोली—"मेरे भाग्य में जो होना था वह हो गया, कोई मेरी क़िस्मत नहीं बदल सकता।"

चाचा को यह बात अच्छी न लगी। पर चाची को यह बात बहुत पसन्द आई। उसने कहा—"सच कहा बेटी ! मैंने जो समझा था तू उससे उलटी निकली। इस युग में पढ़ी-लिखी लड़की ऐसी गुणवती क्यों कर हो सकती है यही आश्चर्य की बात है।"

सुमित्रा ने कहा—"यह तो माईथॉलोजिकल फिल्म की हीरोइन बन रही है, और वह लड़का बिल्कुल अंग्रेजी क्राइम-पिक्चर का हीरो है। वह मरा नहीं, जिन्दा होगा।"

चाचा बोले—"जिन्दा भी होगा तो किस काम का ? सात साल से कम के लिए अन्दर जायगा नहीं।"

फिर बाप-बेटी आपस में इस प्रकरण पर विचार करने लगे। कानून और यथार्थवाद दोनों की बहस का विषय था।

गोरी उठकर अन्दर चली गई। विश्वास उसे भी था कि यशपाल नहीं मर सकता। कोई लड़की कुँवारी विधवा नहीं हो सकती। लेकिन वह कैसा जुल्म कर रहा है ? वह अपराधी था ? वह क्रिमनल था ? मैंने क्रिमनल से प्रेम किया ? यह क्या किया ? वह मुझे धोखा दे गया, यह कैसे हो गया ? वह बड़ा निर्मोही निकला। क्या अनर्थ किया है उसने ? वह मर गया ? नहीं यह नहीं हो सकता, वह मर नहीं सकता। जब तक मेरे मन में प्रेम जीवित है, वह

नहीं मर सकता। वह पापी भले ही हो, वह कुछ भी करे, मगर ज़िन्दा रहे। वह यों भागकर कहाँ जायगा। आखिर एक दिन जरूर पकड़ा जायगा। तब मैं उससे जाकर पूछूँगी—'अरे ओ निर्दयी! तूने मुझसे किस पाप का बदला लिया है? मैंने तेरे साथ क्या किया था? मैंने तो तुझसे कभी रुपया भी नहीं माँगा था; फिर तूने यह किसके लिए अपराध किया? मेरी गृहस्थी बनाने से पहले ही उजाड़ दी।'

यही सब सोचते-सोचते उसकी आँखों से अश्रु की धारा बह निकली, उसका गिरेबान भीग गया; छाती फटने लगी। उसका जी चाहा कि वह गले में फाँसी डालकर मर जाय—इस जीवन से मौत भली।

लेकिन वह मर न सकी। उसे एक आशा थी कि जीवन के किसी मोड़ पर उसे यशपाल अवश्य मिलेगा। और जब वह मिलेगा, तो उसके सामने ही गले में फाँसी डाल लूंगी। फिर वही उसका अन्तिम संस्कार करेगा यही एक इच्छा उसके जीवन का आधार बन गई।

गोरी अपने जीवन की सबसे बड़ी घटना के बाद कई दिनों तक घर से बाहर न निकली। वह लोगों की नज़रों का मुक़ाबला न कर सकती थी। लोग उसकी तरफ़ उँगली उठायेंगे और कहेंगे—यह वह लड़की है जो लव-मैरेज करने गई थी, और विधाता ने वेदी पर से ही इसके चेहरे का फूल नोच लिया।

लेकिन मुहल्ले में शुरू-शुरू में तो यह बात लोगों को खूब याद रही। हर घर में इसकी चर्चा होती रही। माँ-बाप अपनी बेटियों को यह कहानी सुनाते रहे। किन्तु बरसात जब खत्म हो गई तो गोरी के माथे की जमी हुई धूल भी बह गई। लोग इस बात को भूल गये।

इस तरह एक साल बीत गया।

●

१४

एक दिन चाचा गोरी को लेकर घर से बाहर निकले और एक होटल में उसे बिठाकर बोले—"मैं अभी आता हूँ बेटा !"

गोरी यशपाल के साथ इस होटल में दो-एक बार आई थी। इत्तिफ़ाक़ से वह उसी कैबिन में बैठी थी जहाँ यशपाल के लिए उसने चाय बनाई थी, और फिर यशपाल ने चाय पीते हुए कहा था, 'शक्कर तो इतनी मीठी नहीं होती गोरी जितनी चाय मीठी है।'

यह बात सुनकर गोरी के मन में जो प्रेम का फूल खिल आया था, वह मीठे स्वर से लहराने लगा था। आज इसी बात को अकेले में याद करके गोरी की आँखों में आँसू आ गये। चाय की ट्रे उसके सामने रखी थी—रखी रही—गोरी ने चाय नहीं बनाई।

थोड़ी देर के बाद गोरी के चाचा अन्दर आ गये। उनके साथ एक सूटेड-बूटेड आदमी भी था, जिसके कानों में उसकी कनपटियों के बाल कह रहे थे कि तू बूढ़ा हो गया है लेकिन चाल-ढाल से वह जवानों की नकल कर रहा था।

चाचा ने परिचय देते हुए कहा—"यह सेठ राम रतन हैं; मेरे मित्र, और यह मेरी भतीजी है गोरी ! इंटरमीडियेट तक पढ़ी है, घर का सारा काम-काज खुद करती है और खाना ऐसा पकाती है

कि हम घर वाले उंगलियाँ तक चाट जाते हैं।" फिर गोरी से बोले—"बेटी ! इनके लिए चाय बनाओ। यह मेरे मित्र हैं, लखपती हैं।"

गोरी चाय बनाने लगी।

सेठ राम रतन गोरी को घूर-घूर कर देख रहे थे। उसे अपनी नज़रों में यों तौल रहे थे जैसे कसाई बकरा खरीदने से पहले तौला करता है।

"क्या आप कहीं नौकरी करती हैं ?" सेठ राम रतन ने गोरी से सवाल किया।

"जी नहीं।" गोरी इतना सा उत्तर देकर मौन हो गई।

"उमर कितनी है आपकी ?" सेठ ने दूसरा प्रश्न किया।

गोरी को सेठ का यह प्रश्न बड़ा विचित्र लगा। उसने नज़र उठाकर सेठ की तरफ़ खा और बोली—"मालूम नहीं।"

सेठ इस उत्तर पर अपना चश्मा उतार कर साफ़ करने लगे और बोले—"आप कुछ खायेगी ?"

"जी नहीं।"

गोरी ने उसके प्रश्न का उत्तर एक ही शब्द में दिया।

चाचा बोले—"अजी बिलकुल ही कुछ नहीं खाती। इतने थोड़े से आहार पर कैसे जीती है, हमें तो हैरानी होती है।"

"आप कुछ खायेंगे ?" सेठ जी चाचा जी से पूछा।

"जी मैं— क्या खाऊँगा ?" और चाचा जी ने वेटर को पुकारा—"ब्वॉय।"

"यस सर।" कहते हुए वेटर अन्दर आ गया।

"एक प्लेट सीख-कबाब लाना।" चाचा जी ने आर्डर दिया। और ब्वॉय चला गया।

गोरी के चेहरे पर जो तिल था, सेठ राम रतन उसे गौर से देख रहे थे। गोरी ने चाय बनाकर सेठ साहब के सामने रख दिया। सेठ जी ने चाय की चुस्की लेते हुए कहा—"कौन से कालेज में पढ़ा है आपने ?"

गोरी ने कहा—"नाम याद नही।"

सेठ जी दिल में सिटपिटाये, लेकिन ऊपर से ही-ही करने लगे। "बहुत खूब ! बहुत खूब !! क्या हाजिरजवाबी है ?"

चाचा जी ने मौके को संभालते हुए कहा—"इसकी आदत ही ऐसी है, प्रसन्न चित्त रहती है।"

सेठ जी बोले—"मुझे ऐसी आदत बहुत पसन्द है।"

गोरी ने उठते हुए कहा,—"चलिए चाचा जी, घर चलें।"

"अरे ! अरे !!" सेठ जी एक-बारगी बोले—"इतनी जल्दी !" गोरी बोली—"चलिये ना चाचा जी !"

चाचा जी ने कहा—"मुझे सेठ जी से काम है बेटा, तुम जरा बाहर ठहरो। मैं अभी आता हूँ दो मिनट में।"

गोरी बाहर चली गई और होटल के दरवाजे पर अचानक मैडम सोफिया नजर आ गई। सोफिया गोरी को देख कर लिपट गई और गोरी उसका स्पर्श पाकर सब कुछ भूल गई। सोफिया की गोदी में माँ की ममता थी। वह उसे खींच कर अन्दर ले जाते हुए बोली—"हम तुमको एक बात बताना माँगता है, तुम जानता है कि नहीं ?"

गोरी सोफ़िया के साथ केबिन में घुस गई। वह कैबिन उस कैबिन से मिला हुआ था, जिसमें से गोरी अभी उठकर आई थी, और चाचा जो सेठ राम रतन से बातें कर रहे थे।

अन्दर बैठकर सोफ़िया ने चाय का आर्डर दिया और फिर बोली—"तुमने अपना शादी बनाया ?"

गोरी ने उसकी तरफ देखा और कहा—"हाँ बनाया।"

सोफ़िया उसकी तरफ देखने लगी—'तुम्हारा शादी कब हुआ ?"

"आपके सामने हुआ था ना, यशपाल के साथ।"

"यशपाल तो तुम्हें छोड़कर चला गया।"

"लेकिन मेरा मन तो उसे छोड़ कर नहीं गया, न मेरा यह शरीर ही मुझे छोड़कर गया है।"

"लेकिन तुम तो अन-मैरिड है।"

"नहीं ! मैं विवाहित हूँ और यह नहीं जानती कि विधवा हूँ या सधवा।"

सोफ़िया गोरी की बात को न समझ सकी लेकिन भाव समझ गई। उसकी आँखें सजल हो गईं। उसने अपनी दोनों बाहें गोरी के गले में डाल दीं और बोली—"यशपाल जिन्दा है।"

गोरी यह सुनकर रो पड़ी।

सोफ़िया बोलती चली गई—"उसने मुहब्बत किया है, वह तुमको कभी नहीं भूलने सकेगा—कभी नहीं और तुम्हारे लिए उसने कितना बड़ा काम किया है तुमको मालूम है ?"

"हाँ।" गोरी ने आँखें पोंछते हुए कहा—"जो मुझे मँझधार में छोड़कर चला गया। इससे बड़ा वह और क्या काम कर सकता है ?"

सोफ़िया ने कहा—"बैड-लक ! हमको वह बोलता तो हम उसको दस हजार रुपया देने सकता था। पर हमको वह बोला नहीं कि तुम्हारा फादर का रुपया देने का है।"

"रुपया ?" गोरी गुस्से मे तेज होकर बोली—"कौन सा रुपया ?"

"अरे ! तुम्हारे ही लिए तो उसने बैंक से दस हजार रुपये का फ्रॉड किया है।"

"मेरे लिए ?" गोरी सिटपिटा गई।

"हाँ तुम्हारे लिए। तुम्हारे चाचा को उसने कैश दस हजार रुपया दिया तुम्हारा कर्जा उतारने को।"

गोरी ने कहा—"यह झूठ है।" वह आरोप को सहन न कर सकी। वह मुँह में कपड़ा लेकर रोने की आवाज़ को रोकने लगी।

सोफ़िया हैरान होकर उसकी तरफ़ देखने लगी कि यह सच्ची वात को झूठ क्यों वता रही है। उसको गोरी के रोने ने व्यग्र कर दिया था।

ऐसे समय पर वगल के कैबिन से हंसने की आवाज़ आई और फिर चाचा जी कहने लगे—"अजी वह असली फूल है। उसी एक तिल की क़ीमत एक नौजवान लड़का दस हज़ार रुपये दे गया, और आप तो भगवान की कृपा से लाखों रुपये के मालिक हैं। वीस हज़ार से कम पर तो कुछ हो ही नहीं सकता। मैं तो लूँगा ही नहीं; बेटी का धन खाना मेरे लिए पाप है। लेकिन क्या करूँ, लड़की के वाप पर कर्ज़ा है वह चुकाना होगा। वरना मुझे रुपये का क्या करना है ?"

गोरी चौंक गई; उसे सारी वात स्पष्ट हो गई। यशपाल ने दस हज़ार रुपया क्यों चुराया, और किस लिए चुराया ? वह तड़प गई; उसके चेहरे का रंग वदल गया।

सोफ़िया को उसका रोना देखकर खुद भी रोना आ रहा था। वह बोली—"डार्लिग ! तुम हमारे घर नहीं आता।"

गोरी वोली—"अव आऊँगी।"

"कब ?" सोफ़िया ने पूछा।

गोरी बोली—"शायद आज ही। अब मेरा कोई ठिकाना नहीं।" यह कहकर गोरी चुप हो गई और बिना चाय पिये ही उठ खड़ी हुई।

सोफ़िया भी उठ कर खड़ी हो गई और बोली—"हमने आज तुमको बड़ा तकलीफ़ दिया। तुम्हारे हार्ट के अन्दर जो होता है···।" इसके आगे वह बिचारी भी कुछ न बोल सकी, केवल अपने अश्रु पोंछने लगी।

गोरी कैबिन से बाहर निकल गई। होटल के हॉल में लोग खा-पी रहे थे; हँस रहे थे, क़हक़हे लगा रहे थे। गोरी को ऐसा लगा जैसे सब उसकी हालत पर हँस रहे हैं, उसके चरित्र पर हँस रहे हैं, उसके खानदान पर हँस रहे हैं। वह तेज़ी से चली गई।

*　　*　　*

चाचा जी जब घर आये तो उन्हें गोरी से बड़ी शिकायत थी कि वह उन्हें बिना बताये होटल से चली आई और वह अपनी भतीजी को सारे शहर में ढूँढ़ते फिरे। यह कैसा ज़माना आ गया है।

ड्राइङ्ग रूम में खड़े वह गोरी की शिकायत कर रहे थे। और गोरी का कहीं पता नहीं था। आज फिर उसके कमरे का दरवाज़ा बन्द था। उन्होंने अपनी श्रीमती को पुकार कर कहा—"तुम सच कहती हो सुमित्रा की माँ, यह लड़की······।"

लेकिन चाचा जी का वाक्य पूरा होने से पहले ही चाची उचक कर अपने कमरे से बाहर निकल आईं और बोलीं—"खबरदार जो उस लड़की पर कोई लांछन लगाया तो···! मैं सब जान गई हूँ। तुम्हारा किसी युग में भला नहीं होगा।"

"पहले दस हज़ार रुपये पर बेटी को बेचा और उस निर्दोष यशपाल को अपराधी बनाया। अब दूसरे सेठ से बीस हज़ार पर सौदा

कर रहे हो। बे-शर्म ! ऐसे घर वाले से तो मैं विधवा होती तो अच्छा था।"

चाचा जी अपनी चोरी का भण्डा फोड़ सुनकर ठिठक गये लेकिन फिर संभल कर बोले—"क्या बकती हो तुम ? मैं बेटी को बेच रहा हूँ।" चाचा ने आज गुस्से में अपनी घर वाली को एक चांटा भी मार दिया।

लेकिन चाची ने भी चाचा के बाल नोच लिये और चीखना-चिल्लाना शुरू कर दिया।

इतने में कमरा खोलकर गोरी बाहर निकली और चाची को संभालकर बोली—"मेरे लिए अपने घर में कलह क्यों करती हो चाची ? मैं तो जा रही हूँ।"

चाची बोली—"तू जा रही है तो क्या मैं यहीं रहूँगी ? मैं भी तेरे साथ ही जाऊँगी। इस घर का अन्न-जल मेरे लिए हराम है। जिसने अपना धर्म छोड़ दिया वह मर गया। मैं आज से विधवा हूँ।" यह कहकर चाची ने अपनी चूड़ियाँ तोड़ डालीं, और गोरी का हाथ पकड़ कर कमरे से बाहर निकल गईं, फिर उसने पलट कर कहा—"अगर तू असली बाप का बेटा है तो सुमित्रा का भी सौदा करना। फिर देख उसके मामा आकर तेरी क्या गत करते हैं ?"

चाचा हतबुद्धि से खड़े यह सब देखते रहे और चाची अपनी भतीजी को लेकर घर से निकल गईं।

●

१५

●

सोफ़िया ने गोरी का अपनी बहू की तरह स्वागत किया। उसने अपने घर में रहने की जगह दी। यशपाल के कमरे की मालिक अब गोरी ही थी।

यशपाल की चीज़ें जहाँ रखी थीं, यशपाल के चले जाने के बाद भी वहीं रखी रहीं। सोफ़िया को जब अपने बेटे की याद आती तो वह कमरा खोलकर रो लेती और फिर उसे बन्द कर देती थी। गोरी के आ जाने से भी उस कमरे में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। जहाँ सामान पड़ा था, वहीं पड़ा रहा। यशपाल के पलंग पर गोरी ने पहली रात तो रो-रोकर काटी, क्योंकि जिस दिन यशपाल भागा था, उसने अपनी दुलहन के लिए उस कमरे को खूब सजाया था, आज वह सजावट गोरी के दिल में तीर की तरह चुभ रही थी।

चाची ने जब कमरे को देखा तो कहा—"वह सचमुच मर्द था बेटी, उसने जो कुछ किया तेरे लिए किया। और तू अब उसकी आस पर जीवन भर बैठी रहेगी, यह सोच कर मेरे सीने पर साँप लोट जाता है। यह पहाड़-सी जिन्दगी कैसे बितायेगी तू ?"

गोरी दर्द से बिलबिला उठी। उसकी हालत उस दुल्हन की तरह

थी जिससे सुहाग छीन कर सिर्फ सुहाग का एक कमरा दे दिया गया हो। औरत की गोद सूनी करके जिससे केवल लुटी हुई ममता के आधार पर जीते रहने का वचन ले लिया गया हो। ममता के सीने में जो दूध भरा है उसको वह क्या करे? कहाँ टपकाये? छाती में दूध के सूख जाने की वेदना को ये पुरुष क्या जानें?

पर गोरी बेबस थी। प्रेम के आधार पर उसे जीना था, वह जीती रही। इस सूने जीवन का भार लिये।

सोफ़िया के गेस्ट हाउस में एक तरह की रौनक आ गई। जो दो गेस्ट उसके मकान में रहते थे, वह जरा बन-सँवर कर निकलने लगे। रात को देर से आने वाले ये मेहमान अब सूर्य अस्त होने से पहले ही आ जाते और कमरे में बैठ कर इस उम्मीद पर ताक-झाँक करते थे कि शायद गोरी नज़र आ जाये।

मर्द इस मामले में बड़ा कमजोर है। औरत अकेली है, जवान है, सुन्दर है, तब उसे साथी की तलाश अवश्य होगी। और हर पुरुष अपने आपको नारी का अतीत का एक साथी समझता है। उससे बड़ा नारी का मित्र कोई हो ही नहीं सकता। लेकिन आज का पुरुष यह सोचने से इन्कार कर देता है कि नारी का हृदय कुमुदनी का फूल है। जब उसकी पखुड़ियाँ एक बार सूरज की किरणें पाकर संकुचित हो जाती हैं, तो फिर उन पंखुड़ियों के खुलने की संभावना नहीं होती।

नारी एक बेल है जो दरख्त पर चढ़ जाने के बाद जब जबरदस्ती उतारी जाती है, तो भी उसके बल नहीं जाते। उसके आलिंगन का कस बल किसी तरह नहीं निकलता। वह शरीर के मिट्टी हो जाने पर ही बदलती है। इस पर भी उसके संस्कार रहते हैं या नहीं, कौन जाने?

पर नारी ने ही प्रेम करना सीखा है। पुरुष तो केवल उसके प्रेम का प्रतिबिम्ब है, और कुछ नहीं। प्रतिबिम्ब भी तभी पड़ता है जब दर्पण उज्ज्वल हो। आजकल ऐसा दर्पण भी कहाँ मिलता है? वासना की कालिमा ने आज के दर्पण काले कर दिये हैं। कहीं इसी कारण उनमें टेढ़े-मेढ़े धब्बे दिखते हैं।

वे जो दो प्राणी सोफ़िया के गेस्ट-हाउस में रहते थे, उनके मन पर भी गोरी की कई टेढ़ी-मेढ़ी सूरतें नज़र आने लगीं।

'काला तिल बड़ा सुन्दर है।'

'क़द खूब है।'

'और यौवन—वाह-वाह······!'

चटखारा लेकर एक आदमी दूसरे से कहता, और दूसरा बोलता कम था, पर देखता ज्यादा था। वह गोरी को निहारता था जब कि पहला पुकारता भी था। पर गोरी चुप थी और सोफ़िया इस बात से बेखबर।

छुट्टी के दिन एक दोपहर को कम बोलने वाला प्राणी ग्रामोफोन लेकर आया और फिल्मी रेकार्ड बजाने लगा। उसने दूसरे नौजवान पड़ोसी को भी इस संगीत का न्यौता दिया।

सोफ़िया का गेस्ट हाउस दोपहर को गूंजने लगा। फिल्मी गाना बजने लगा।

'गोरी के नखरे बड़े······।'

और इसके साथ ही खिड़कियों से ताक-झाँक भी शुरू हुई। एक बार गाना बजा तो सोफ़िया कुछ समझी नहीं। मगर दूसरी बार भी वही गाना बजा और क़हक़हे गूंजे, तो सोफ़िया के कान खड़े हुए।

गोरी तो अपनी वेदना के कारण ज्यादा ध्यान ही नहीं देती थी, वह अपने दुःख में लीन थी।

सोफ़िया तो इस तरह के कई किस्से देख चुकी थी, वह उठकर धम-से अन्दर जा धमकी और लगी कोसने। ग्रामोफोन तो बन्द हुआ ही, उसने वह कमरा भी बन्द कर दिया। शाम को ग्रामोफोन वाले का बिस्तर भी लपेट दिया गया और गेस्ट-हाउस के बाहर सड़क पर रख दिया गया। ज्यादा बोलने वाले के कान भी खड़े हो गये। उस दिन से उसने भी रास्ता काटकर चलना शुरू कर दिया।

यह आदमी इञ्जीनियरिंग कॉलेज का स्टूडेण्ट था। खाते-पीते घर का इकलौता लड़का था। कपड़े बढ़िया पहनता था, रहता भी ठाठ से था और कभी-कभी सोफ़िया को उधार भी दे देता था।। सौम्य भी था; नाम था चन्द्रमोहन। कभी-कभी वह गाना भी गाता था, और अच्छा गाता था। सोफ़िया के गेस्ट हाउस में आकर तो वह 'रॉक-एन-रॉल" भी गाने लगा था।

उसने गोरी को जिस दिन से देखा था उसके मन में एक आशा जाग उठी थी। करीब के कमरे में एक लड़की—जवान और सुन्दर—रहती है। वह कौन है ? इसकी टोह उसने लगा ली थी, गोरी की चाची से।

चाची को बोलने की आदत बहुत थी। और सोफ़िया की भाषा मंजी हुई न होने के कारण चाची को उससे बात करने का स्वाद नहीं आता था। बातों का रस जिसको पड़ जाता है, वह बातों के लिए बावरा-सा हो जाता है। चन्द्रमोहन की भाषा साफ़ थी, इसलिए चाची उससे बात-चीत करती रहती थी, बल्कि उसकी राह देखा करती।

कुछ दिनों से चन्द्रमोहन ने गोरी के कमरे में भी आना-जाना शुरू कर दिया था। सोफ़िया भी उसे नहीं रोकती थी और चाची

तो उसे इस युग का महान् आदमी समझ कर उस पर न्योछावर हो रही थी।

एक दिन गोरी अपने पुराने दफ्तर में नौकरी की अर्ज़ी लेकर गई। पर वह नामंज़ूर हो गई। वहाँ से थकी-हारी हुई आई तो चन्द्रमोहन उसके कमरे में ही बैठा चाची से बातें कर रहा था।

चाची ने पूछा—"क्या हुआ नौकरी का?"

गोरी ने कहा—"मैनेजर नहीं मानता।"

"अब कोई नौकरी नहीं है?"

चन्द्रमोहन गोरी से बात करने का हमेशा रास्ता ढूंढ़ा करता था, उसे आज मौका मिल गया। "नौकरी! क्या आप नौकरी की खोज में हैं?"

"जी हाँ!" गोरी इतना सा जवाब देकर घड़े से पानी उँडेलकर पीने लगी।

"आप कहाँ तक पढ़ी हैं?"

"इण्टरमीडियेट तक।"

"आपने पहले क्यों नहीं बताया? मेरे दोस्त की यहाँ एक मिल है, उसमें टाइपिस्ट लड़की की जरूरत है। मैं वहाँ आपको फ़ौरन नौकरी दिलवा देता।" इतना कहकर वह गोरी के मुख की ओर देखने लगा।

गोरी ने गिलास धोते हुए कहा—"मैं टाइप करना नहीं जानती।"

"तो क्या हुआ, वहाँ डिस्पेचर तो हो ही सकती हैं।"

चाची बोल पड़ीं—"हाँ बेटा, यह ठीक है। नौकरी तो चाहिए। यह भी अपने बेटे की तरह हैं......।" फिर वह चन्द्रमोहन से बोली—"हाँ बेटा! तुम इसकी नौकरी लगवा दो तो अपना पाप कटे।

सोफ़िया सारा खर्च उठाती है आखिर उससे अपनी कोई नातेदारी तो नहीं। कब तक हम दोनों को भरती रहेगी ?

"तुम्हारे चाचा तो शायद भगवान से यह दिन चाहते थे कि मैं उनके घर से उठकर चली जाऊँ तो वह मनमानी करें। एक दिन इधर झाँका तक भी नहीं।" इतना कहते-कहते चाची की आँखें भर आईं। स्वर भी भारी हो गया। उसने अपनी आँखें पोंछ कर गोरी से कहा—"और तो और, मेरी कोख-जाई को भी माँ की याद एक बार न आई। राम-राम, कैसा जमाना आ गया है ? पर मैं भी अपने बाप की जाई हूँ तो इस बाप-बेटी के मुँह न लगूँगी। गोरी ! यदि मैं मर गई तो मेरी चिता को तुम्हीं आग दिखाना। उस पापी को मेरी अर्थी तक न छूने देना।" और फिर चाची रो पड़ीं।

गोरी चुप रही। चन्द्रमोहन ने चाची की ओर से मुँह घुमाकर गोरी की ओर देखा। गोरी की आँखें चन्द्रमोहन से एक क्षण के लिए चार हुईं और फिर वह जमीन की ओर देखने लगी।

कमरे में थोड़ी देर स्तब्धता रही। उसको तोड़ा चन्द्रमोहन ने, बोला—"ज़माना तो बुरा नहीं चाची, आदमी बुरे हो गये हैं। देखो ना, इस साथ वाले कमरे में वह रहता था, कैसी ताक-झाँक करता था। उसने तो मेरी इज्ज़त भी खतरे में डाल दी थी। कोई भी भला आदमी क्या उसके साथ रह सकता है ? आँण्टी उस दिन कितना बिगड़ीं ? वह तो यों कहो मेरी किस्मत अच्छी थी, नहीं तो मेरा सामान भी बाहर निकाल फेंकती। हालाँकि मेरा उसमें कोई दोष नहीं। चाचा की बात जो आप कहती हैं, तो आदमी गलती करके पछताता ज़रूर है। चाचा भी पछता रहे होंगे। लेकिन शर्म के मारे अब वह सामने नहीं आ सकते। कहो तो एक बार उनसे मिल लूँ ?"

चाची को तिनके का सहारा मिल गया, वह भी चाहती थीं कि अपनी बेटी को देख लें, खुद तो नीचा होना उनके लिए मुश्किल था, लेकिन समझौते के लिए तैयार थीं। चाचा यदि उन्हें लेने आयें तो वह फ़ौरन ही उनके साथ चली जायँ। ऊपरी दिल से बोलीं—"ना बेटा! तुम मत जाना। घर तो पास ही है, लेकिन मैं उनके पास तुम्हें नहीं भेजूँगी।" फिर गोरी की ओर देखकर बोलीं—"पर गोरी, तेरे चाचा का कसूर तो इतना ही है ना कि उसने पैसा माँगा, और पैसा लिया। क्या पता शायद वह दहेज में तुम्हें ही दे देता? पर इसकी नौबत ही नहीं आई। जो तेरे पीछे दीवाना था वह तो तुझे छोड़कर भाग गया, अब पुलिस के डर से मारा-मारा फिरता है। एक दिन इधर झाँक लेता तो उसके प्रेम का भी विश्वास होता, पर अब तो मुझे यशपाल पर सन्देह होने लगा है।"

गोरी जो अपने प्रेम को एक राज़ समझ कर सीने में छुपाये हुए थी वह भीतर से तड़प उठी, पर मन के भाव को शब्दों में प्रकट न होने दिया। केवल कुर्सी पर करवट बदल कर बैठ गई।

चन्द्रमोहन ने गोरी की ओर देखकर कहा—"चाची जी की बात सच्ची जान पड़ती है। यदि मैं यशपाल की जगह होता तो न भागता। पुलिस के सामने डटकर खड़ा हो जाता और कहता—'ले चलो, जहाँ ले चलना हो। इसके बाद जेल से छूट कर तो आ जाता। और फिर दूसरी बात यह है कि मैं तो साफ़-साफ़ कह देता कि चाचा ने माल लिया है। इसको साथ ले चलो।"

चाची बोली—"मर्द का काम तो यही होता है। शाबाश है तुझे। मन लगी बात कही है तू ने।"

गोरी ने कहा—"आप होते ही क्यों?"

चन्द्रमोहन अन्दर से हिल गया। पर ऊपर से वैसा ही बना रहा और धीरे से बोला—"होने को क्या नहीं हो सकता ?"

गोरी बोली—"जो आप सोचते हैं वह नहीं हो सकता।" और उठकर चूल्हे के पास चली गई।

चाची उसकी बात का मतलब तो न समझ सकी पर चन्द्रमोहन समझ गया। वह गोरी की बात के पीछे के इस भाव को भी जान गया कि गोरी मेरी यह बात समझ गई है। वह केवल गोरी की ओर देखता ही रहा।

नारी जब जान लेती है तो एक निश्चित क़दम अवश्य उठाती है। उसके मन में दुविधा नहीं रहती। दुविधा तो पुरुष के मन में पैदा होती है—ऐसा करे या न करे।

चन्द्रमोहन को लगा कि अब दुविधा और घुटन के टूटने का समय आ गया। नाव मेरी पार ही लगेगी। वह बैठा गोरी की पीठ को देखता रहा। उसने रेशमी रूमाल निकाल कर अपना पसीना पोंछा और कमरा इत्र की सुगंध से भर दिया।

स्टोव कमरे में साँय-साँय करने लगा। गोरी के कान में फिर स्टोव के साँय-साँय के सिवा कोई आवाज नहीं पड़ी। उसकी आँखें जल से भर गईं, और आग के नाचते हुए लाल-लाल शोले जो स्टोव में जल रहे थे, उससे अधिक भयानक एक ज्वाला उसके अन्दर भड़कने लगी।

थोड़ी देर के बाद चन्द्रमोहन चुपचाप उठकर चला गया। बाहर उसे सोफ़िया मिली जो बरामदे में खड़ी बाज़ार की ओर देख रही थी।

"गुड-आफ्टर नून मैडम।"

"गुड-आफ्टर नून।" कह कर सोफ़िया ने चन्द्रमोहन की ओर

देखा। फिर सिर से पैर तक देख कर बोली—"तुम इधर था? हम समझा बाहर होता।"

"नहीं आज कॉलेज से छुट्टी थी।"

इतना कहकर चन्द्रमोहन अपने कमरे की ओर जाने के बजाय सीढ़ियों से नीचे उतर गया।

सोफ़िया उसे जाते हुए देखती रही। फिर कुछ सोचे बिना वह गोरी के कमरे में जा घुसी।

"तुम अभी खाना बनाता है?"

"हाँ।" चाची ने जवाब दिया—"मेरा जी अच्छा नहीं था। गोरी नौकरी के लिए गई थी।"

सोफ़िया ने गोरी की तरफ़ देखा जो पीठ किये आँसू बहा रही थी और उसने सोफ़िया के आने पर घूम कर देखा भी था।

"हमने कितना बार बोला, कि तुम नौकरी नहीं करेगा। यह हमारा इन्सल्ट होता है, पर तुम मानता नहीं। यह बात हमको अच्छा नहीं लगता।"

गोरी फिर भी चुप रही।

'तुम्हारा शादी यशपाल से हुआ। यशपाल को हम बेटा बोला। हमारा बेटा खराब होता तो क्या बहू को घर में रखने नहीं सकता?" और फिर गोरी को सम्बोधित करते हुए बोली—"तुम देखा इधर काहे को नहीं, चुपके-चुपके रोता है। हम सब समझता है। चन्द्रमोहन इधर काहे को होता?"

चाची ने कहा—"वह बिचारा तो यों ही कभी-कभी हमदर्दी के लिए आ बैठता है। उससे बात करके मन हलका कर लेती हूँ। लड़का तो बहुत अच्छा है, तुम तो जानती हो।"

"हाँ-हाँ हम जानता है, अच्छा लड़का है। इसी वास्ते इधर रहता है। अच्छा न होता तो उसको भी निकाल बाहर करता। हम पैसा का भूखा नहीं है, इज़्ज़त का भूखा है। हमारा 'हसबण्ड' जब वार में गया तो हम हम भी गोरी का उमर का होता। सब साला लोग हमको घूरता। हम इधर इसी कमरे में बन्द करके पड़ा रहता। बाहर नहीं निकलता। फिर जब उसका मरने का खबर आया, तो सब सगे वाला लोग इधर आने लगा। बड़ा-बड़ा अमीर आदमी डाली लाता होता। पर हम बोला, हम लव किया अपने 'हसबण्ड' को। औरत एक लव करता, दो नहीं। हम भी तुम्हारी तरह रोता था, पर वह उधर गया, खुदा के घर। उधर से कैसे आने सकता ?"

चाची बोली—"और यशपाल तो अभी ···।"

पर सोफ़िया ने बात काट दी, "उस बदमाश का नाम मत लो। वह साला एकदम गुण्डा निकला। मर्द भी नहीं निकला। एक बार इधर आया होता।"

गोरी ने पलट कर अब सोफ़िया की तरफ़ देखा, जैसे पूछ रही हो—'कब ? किस वक्त ? तुमने मुझे बताया क्यों नहीं ?'

सोफ़िया ने बात जारी रखते हुए कहा—"हम साला को मुँह नहीं लगाया। जो अपना लव का नहीं हुआ, ब्लड का नहीं हुआ, अपनी मम्मी का किधर होगा ? हाँ हमने उसको बेटा बोला, हम मम्मी बना। हम उसको प्यार करेगा, उसका अपने को क्या वास्ता ? वह मर गया, मर गया, एकदम मर गया।"

इतना कह कर वह चुप हो गई और थोड़ी देर बाद फिर बोली—'पर गोरी का उसके साथ शादी किधर बना। यह कोई शादी नहीं है। गोरी उसका वाईफ़ नहीं हुआ; एकदम नहीं हुआ। हम अभी तक

उसको अन-मैरिड (कुंवारी) समझता है। इसका यशपाल से कोई वास्ता नहीं।"

चाची बोली—"मैं भी तो यही कहती हूँ। दो-चार साल रहता, घर-गृहस्थी बनती, फिर ऐसी घटना घटती तो कोई बात भी थी। हम भी कहते कि गोरी की शादी हो चुकी है और अब 'न सूत न कपास कोरी से लठ्ठम-लट्ठा'।"

"हाँ, हम भी यही बोलता है।" सोफ़िया ने हाँ में हाँ मिलाई।

गोरी ने एक बार सर उठाकर सोफ़िया की ओर देखा फिर बोली—"तो तुमने मुझे अपने घर में लाकर क्यों रखा है?"

सोफ़िया के पास इस प्रश्न का उत्तर था, फिर भी वह बोली—"हम तुम्हारे भले की कहता है; समझता नहीं तुम।"

"मेरे भले की कहने की जरूरत नहीं। मैं अपना भला-बुरा जानती हूँ। तुम अगर जगह नहीं दोगी तो मैं यहाँ से चली जाऊँगी। नौकरी करके मैं अपना पेट पाल सकती हूँ।"

यह बात सुनकर सोफ़िया का मुंह लाल हो गया, पर कुछ बोली नहीं। उठी और बाहर निकल गई।

चाची ने कहा—"गोरी तुझे क्या हुआ है? उस बूढ़ी के पीछे भी पड़ गई तू। उसने आसरा दिया हमें।"

"न देती आसरा। मैं उसके पास मांगने आई थी? निकाल दे घर से बाहर।" गोरी क्रोध में आ गई।

गोरी के कमरे में इतनी तीखी बात चल रही थी लेकिन सोफ़िया के कमरे में से बरतन टूटने और नौकरानी को गालियाँ देने की आवाज आने लगी।

चाची यह सब देख-सुनकर डर गईं। बोलीं—"तेरा गुस्सा दूसरों पर निकाल रही है सुन ले।"

गोरी उठकर तेज़ी से कमरे के बाहर चली गई और सीधी सोफ़िया के कमरे में जाकर खड़ी हो गई। सोफ़िया ने गोरी को देखा तो उसे चुप्पी लग गई। गोरी ने कहा—"अगर ऐसा ही गुस्सा आया था मम्मी तो मुझ पर निकाल लिया होता। इस बिचारी ने क्या किया है ?"

सोफ़िया का गुस्सा पानी की तरह वह गया। उसने गोरी को खींचकर छाती से लगा लिया, रोते हुए बोली—"हम तुमको इस तरह नहीं देख सकता······नहीं देख सकता।"

गोरी रो रही थी।

और नौकरानी टूटे हुए बरतन सँभालने लगी।

●

१६

●

चन्द्रमोहन चाचा के घर गया या नहीं यह तो पता नहीं चला, लेकिन गोरी के चाचा की बेटी एक दिन अपने-आप दोपहर को गेस्ट-हाउस में आ धमकी। चाची उसे गले से लगाकर रो पड़ी और जब उसने बताया कि चाचा जी बीमार हैं और उन्होंने बुलाया है तो चाची दुविधा में पड़ गईं। उसका दिल कह रहा था कि यह मुझे बुलाने का बहाना बनाया गया है।

"कब से बीमार हैं?—क्या हुआ?—कैसे बीमार पड़ गये?"

गोरी ने चाची से कहा—"चाची! तुम्हें जाना चाहिए।"

चाची के अहंकार ने एक बार सिर उठाना चाहा।

पर चन्द्रमोहन बोला—"बीमार को देखकर फिर लौट आना चाची जी। एक बार तो हो ही आओ क्योंकि आज-कल जिन्दगी का भरोसा नहीं। और फिर लड़की लेने आई है; वह कह रही है कि बाबूजी उस दिन से बीमार हैं जिस दिन आप घर से निकल आई थीं। अब इस बात को भी छः महीने बीत गये।"

चाची रह न सकीं, उठीं और गोरी का हाथ पकड़ कर बोलीं—

"बेटी, अगर तू भी चलती तो अच्छा था। तुम्हारे चाचा अपनी भूल की क्षमा तो माँग लेते।"

गोरी ने खुले दिल से चाची को देखकर कहा—"तुम क्षमा करोगी चाची तो उन्हें कोई पाप नहीं लगेगा ! मैं सौगन्ध खाकर कहती हूँ अब इस घर से मेरा जाना हो ही नहीं सकता। मम्मी को किसके आसरे छोड़कर जा सकती हूँ ?"

चाची चुप रहीं, केवल आशीर्वाद देकर बोलीं—"तेरी मम्मी जो कहें उनका कहना मानना बेटी। उनसे बढ़कर संसार में तेरा अपना कोई नहीं है।"

चन्द्रमोहन ने नीचे से पुकारा—"टैक्सी खड़ी है। बड़ी मुश्किल से ढूँढ़ कर लाया हूँ, आज टैक्सी वालों की हड़ताल है।"

चाची कमरे से बाहर निकलीं तो सोफ़िया के गले लग कर बोलीं—"मैं तो जा रही हूँ। अगर तुमसे हो सके तो मेरी बेटी की शादी कहीं कर देना क्योंकि तेरा बेटा तो अब लौटकर आयेगा नहीं।"

सोफ़िया ने आँखें पोंछते हुए कहा—"हम तो कब से यह करना माँगता है। पर वह मानता नहीं, हमारा बेटी। हम क्या करेगा ? ओह गॉड !"

सोफ़िया टैक्सी तक चाची को छोड़ने आई। मगर गोरी कमरे से बाहर नहीं निकली।

चाची के जाने से सोफ़िया के गेस्ट हाउस की रही-सही रौनक़ भी चली गई। नौकरानी शाम को अपने घर चली जाती थी। चन्द्र-मोहन अपने कमरे में घुसकर पड़ा रहता था। लेकिन चाची आधी रात गये तक बराण्डे में बैठा करती थीं, और पिछले दो महीने से चन्द्रमोहन भी चाची के पास ही बराण्डे में आ बैठता था। चाची

और चन्द्रमोहन घण्टों बैठे बाज़ार से गुज़रने वाली मोटरों और बसों को देखा करते।

आज चाची अपने घर चली गई थीं इसलिए चन्द्रमोहन कमरे में अकेला था। गोरी भी अपने कमरे में अकेली थी। अभी थोड़ी देर पहले सोफ़िया गोरी के कमरे से उठकर गई है। और उसने गोरी से कहा था— "तू मेरे कमरे में चलकर सो जा, मेरे पास।" लेकिन गोरी अपने सुहाग का कमरा छोड़ना नहीं चाहती थी, तो सोफ़िया अपने स्वर्गवासी पति का कमरा कैसे छोड़ सकती थी ? उसे तो और कहीं नींद ही नहीं आती। पिछले बीस-बाइस वर्षों से वह इसी कमरे में सोने की आदी हो चुकी है।

सोफ़िया के चले जाने के बाद गोरी थोड़ी देर तो पलंग पर करवटें बदलती रही। लेकिन आज उसके मन की दशा कुछ विचित्र हो रही थी। आज उसे यशपाल से एक तरह की घृणा-सी होने लगी। चाची की बात उसके मन में जाग उठी। यदि एक बार वह यहाँ आकर झाँक लेता तो उसके प्रेम पर विश्वास आ जाता, पर अब तो……

गोरी का जी चाहा कि वह खिड़की से छलाँग लगाकर आत्महत्या कर ले, क्योंकि उसके मन से यशपाल के प्रेम का विश्वास उठ गया था। वह अँधेरे में ही पलंग पर उठकर बैठ गई। यह यशपाल का पलंग है। वह आज यशपाल के पलंग का स्पर्श भी सहन न कर सकी और उठकर बाहर बरामदे में निकल आई।

बाहर बड़े ज़ोर की हवा चल रही थी। चौदस के चाँद की चाँदनी बरामदे में बिखरी हुई थी और नीचे सुनसान सड़क थी। दाईं ओर, जो कम्पाउण्ड था, वहाँ के दरख़्त हवा के ज़ोर से झूल रहे थे। उनके पत्तों की खड़खड़ाहट में कभी एक बार सड़क पर से गुज़रने

वाली मोटर का हॉर्न भी सुनाई नहीं देता था। गोरी बरामदे में रखी हुई कुर्सी पर बैठ गई और चाँद की ओर देखने लगी।

उसे बैठे-बैठे जाने कितनी देर गुज़र गई कि सोफ़िया के दरवाज़े के पास उसे परछाईं-सी नज़र आयी, जो धीरे-धीरे उसकी ओर बढ़ने लगी।

गोरी ने देखा वह चन्द्रमोहन था। सोफ़िया के कमरे का दरवाज़ा भी खुला हुआ था। चन्द्रमोहन उस दरवाज़े के पास थोड़ी देर रुका। गोरी देखती रही, लेकिन जाने वह क्यों उठकर अपने कमरे के अन्दर नहीं भागी। उसके मन में चञ्चलता थी या सत्य का उसे विश्वास था। कोई नहीं जानता। शायद स्वयं वह भी नहीं जानती थी।

लेकिन चन्द्रमोहन सोफ़िया के दरवाज़े को पार न कर सका, जैसे वह लक्ष्मण रेखा हो या उसके प्यार की अन्तिम सीमा हो। वह थोड़ी देर खड़ा निखरी हुई चांदनी में बिखरे हुए काले बालों वाली गोरी को देखता रहा और पलट कर अपने कमरे में चला गया।

फिर उसके कमरे से धीमें स्वरों में गाने की आवाज़ आने लगी—

"ज़िन्दगी की हसीन रातों में,
बेवफ़ा दोस्त याद आते हैं।"

उसके गाने की आवाज़ के साथ ही गोरी के नयनों से अश्रु-जल की धारा बह निकली। उसके गोरे मुखड़े का काला तिल भींग गया। उसके कपोलों पर धारियाँ-सी खिच गईं। जाने वह अपनी वेदना पर रो रही थी या अपने पड़ोस वालों के दर्द पर उसका मन रिस रहा था—यह गोरी ही जाने।

रात के आखिरी पहर में जब चाँद अपनी चाँदनी समेट कर छत के ऊपर चला गया और बरामदे में अँधेरा छा गया तो गोरी उठकर

अपने कमरे में चली गई। उसने दरवाज़ा बन्द कर लिया, अन्दर से चिटखनी भी चढ़ा ली जैसे कह रही हो, 'अब यहाँ कोई नहीं...... कोई नहीं आयेगा।'

और चन्द्रमोहन अपने कमरे में उस समय भींग रहा था। उसका स्वर दर्द में भींग गया था और ऐसा जान पड़ता था जैसे दर्द से उसका दिल काँप रहा हो।

* * *

दूसरे दिन सुबह छः बजे ही सोफ़िया की नौकरानी ने दरवाज़ा खटखटाया और चन्द्रमोहन ने किसी न किसी तरह उठकर दरवाज़ा खोला। नौकरानी जाकर अपने काम में लग गई। सोफ़िया भी आज बहुत जल्दी तैयार हो गई थी।

नौकरानी ने आकर कहा—"आज नारियल पूनम है। हम जल्दी घर जायगा मेम साब।"

सोफ़िया बोली—"भाई को राखी बाँधेगा। क्यों—ठीक ?"

नौकरानी मुस्कुराई - 'हाँ मेम साब।"

सोफ़िया ने कहा—"हमारा भाई शंकर भी अभी आयेगा, उसने अपना भट्टी उठा दिया और जाने किधर चला गया। अब कितना महीना से वह आया ही नहीं।"

नौकरानी ने कोई उत्तर नहीं दिया। वह जल्दी-जल्दी अपना काम खतम करके चली गई।

लेकिन शंकर दादा आ गया। सोफ़िया ने उसे राखी बाँध दी और शंकर रुपयों की ढेरी सोफ़िया के पाँव में रख कर बोला—"पता चला, यशपाल किधर गयेला है ?"

सोफ़िया बिफर पड़ी—"हमको उसका नाम नहीं सुनना मांगता। तुम जब आता है हमको 'पेन' (Pain) देता है।"

शंकर कुछ बोला नहीं। पर सोफ़िया कहने लगी—

"उसका वाइफ़ है, हम क्या करेगा ? हम चाहता है उसका किधर शादी बना दे। पर वह एकदम नहीं मानता।"

शंकर फिर भी चुप बैठा रहा। थोड़ी देर कमरे में सन्नाटा रहा। सोफ़िया चाय बनाती रही। शंकर दादा बैठा रहा।

सोफ़िया ने चाय का प्याला भरकर शंकर दादा को देते हुए कहा—"हमारा एक काम करेगा तुम ?"

शंकर ने प्रश्नार्थक दृष्टि से देखा।

सोफ़िया धीरे से बोली—"तुम एक काम करो। हम गोरी को बुलाता है, तुम उसको बोलो यशपाल मर गया।"

शंकर ने पूछा—"क्यों ? ऐसा क्यों बोलेगा ? झूठ !!"

"तुम मैन, नहीं समझता। हम तुमको समझायेगा।" और फिर धीरे से बोली—"हमारे एक लड़का है चन्द्रमोहन, हम उसके साथ गोरी का शादी बनायेगा।"

इतना कहकर वह अपने कमरे से बाहर निकल गई। और उसने देखा कि गोरी चन्द्रमोहन के कमरे के अन्दर जा रही है। उसके हाथ में एक थाली है और वह आज शृंगार किये हुए है। सोफ़िया इतना देखकर फिर अपने कमरे मे घुस गई और खुश-खुश शंकर का हाथ पकड़ कर उसे खींचते हुए बोली—

"अब तुम्हारा खबर देने की जरूरत नहीं, हमारा काम हो गया। गोरी आज चन्द्रमोहन के कमरे की तरफ़ जाता है। आओ देखो, आज हम बहुत खुश है।" और वह उसे कमरे के बाहर लेकर चली गई।

गोरी ने चन्द्रमोहन के कमरे में प्रवेश किया तो चन्द्रमोहन चौंक गया। मानो रात की चाँदनी गोरी का रूप धारण करके उसके सामने आ खड़ी हुई है। चन्द्रमोहन थोड़ी देर उसकी ओर देखता रहा, फिर बोला—"थाल में क्या लाई हो ?"

गोरी बोली—"भारत की परम्परा।"

चन्द्रमोहन समझ न सका।

गोरी ने थाली रख दी और कहने लगी—"आज रक्षा-बन्धन है।"

चन्द्रमोहन अवाक् रह गया। वह थोड़ी देर गोरी को देखता रहा फिर बोला—"इसका मतलब ?"

गोरी ने राखी उसके हाथ पर बाँधते हुए कहा—"मैं तुम्हारे अधीन हूँ भैया ! मेरी रक्षा करना।"

चन्द्रमोहन हतबुद्धि-सा रह गया।

दरवाज़े पर खड़ी सोफ़िया की आँखों से आँसू निकल आये। और शंकर भी चुप-सा हो गया। सोफ़िया की आशाओं का महल एक बार फिर धड़धड़ा कर गिर पड़ा।

दूसरे दिन चन्द्रमोहन ने गेस्ट हाउस छोड़ दिया, और यह कह कर चला गया कि अब मैं राखी के दिन ही आऊँगा।

उसके बाद सोफ़िया के गेस्ट हाउस में कोई पेइङ्ग-गेस्ट नहीं आया। गोरी के पड़ोसी का कमरा खाली रहा।

सोफ़िया और गोरी अब एक ही कमरे में रहते हैं, नौकरानी चली गई है। गोरी अपने हाथ से खाना पकाती है और सोफ़िया खाती है।

१७

●

सोफ़िया ने जब यह सुना कि गोरी नौकरी खोजने गई थी तो क्रोध के उसका मुँह लाल हो गया। वह बिगड़ कर गरजने लगी—"तुम किस वास्ते हमारा इन्सल्ट करता है। हमारा इधर कौन बेटा-भाई बैठा है। तुम हमारा बेटी है।" इतना कहकर उसने बैंक की पास-बुक उसके सामने पटक दी। यह 'फिक्स डिपाज़िट' का सारा 'एमाउण्ट' हम तुम्हारे नाम ट्रान्सफर करता है—लो सँभालो इसको। अब तुम कभी नौकरी के वास्ते निकला तो हम 'प्वायजन' (विष) खायेगा।"

गोरी को सोफ़िया का स्नेह देखकर रोमांच हो आया। उसके विशाल नयन सजल हो गये और हृदय इस क्रिश्चियन नारी की करुणा पर प्रफुल्लित हो उठा। वह बोली नहीं।

धरती पर बैठी अपने पाँव के अँगूठे से धरती को कुरेदती रही। सोफ़िया उसके समीप आ गई और बिगड़ कर बोली—"तुम बोलता किस वास्ते नहीं ?"

अब गोरी ने आँखें उठाकर उसकी ओर देखा और उसके सजल नयन देख कर सोफ़िया ने उसे उठा कर छाती से लगा लिया। और फिर वह भी रो पड़ी।

दोनों के अश्रुओं से स्नेह और ममता की नदी बह निकली।

कौन किस समय पर आदमी के किस काम आयेगा यह विधाता का खेल है—भाग्य का चक्कर है—नहीं यह प्रेम की डोरी है जिसमें मनुष्य मात्र बंधा रहता है। जहां जिसके मन को ठेस लगती है वहां करुणा का स्रोत फूट पड़ता है और सारा वातावरण ममता से मुखरित हो उठता है।

भारत की दुर्गा का नहीं तो मां गोरी का एकमात्र रूप पश्चिम की 'मेरी' में उजागर दिखाई देता है। रूप भिन्न हैं, धारा एक हैं, ममता एक है, करुणा एक-सी है। जगत् जननी का यही रूप है जो प्रत्येक नारी में होता है।

× × ×

सोफ़िया—दूसरे दिन सेंट फ्रांन्सिस के दर्शन करने गोवा चली गई। घर गोरी को सौंप गई और द्वार पर शंकर का पहरा बिठा गई।

नीचे के बरामदे में सीढ़ी के बिल्कुल आगे वह बिस्तर बिछा कर सोता, जैसे मालिक का सधाया हुआ कुत्ता यत्नपूर्वक सतर्क घर की रक्षा करता है—शंकर भी कर रहा था। गोरी को कोई चिन्ता नहीं थी। अब उसके मन से नौकरी का विचार भी निकल गया। पहले उसका विचार था कि जब सगे चाचा के यहां निरर्थक समस्याओं से जूझने के लिए नौकरी करनी पड़ती थी तो यह बेचारी सोफ़िया तो एक अनजान, एक अपरिचित नारी है। किन्तु अपरिचित अतिपरिचित की राह से गुजर कर मां हो गई थी और ममता के कारण अब उसे इस घर पर एक प्रकार का अधिकार प्रतीत होने लगा था।

शंकर का भी इस घर पर एक प्रकार का अधिकार था मगर उतना ही जितना सोफ़िया उसे देकर गई थी। केवल अन्तर इतना था कि पहले उसके होते उसके अधिकार सीमित थे, अब कुछ सीमा के परे निकल गये थे।

भाजी-तरकारी वह अपनी मर्जी की लाता और खाने के बारे में वह गोरी से अपनी पसन्द और नापसन्द का जिक्र भी कर देता।

गोरी को घर से बाहर जाने की इच्छा ही नहीं होती थी। और यदि वह जाने की चेष्टा भी करती तो कदाचित शंकर क्यों जा रही हो ? कहाँ जा रही हो ? कब आओगी ? ऐसे प्रश्नों का एक ताँता लगा देता जिसका उत्तर देते-देते गोरी ऊब जाती।

जैसे गोरी इस घर की अबला गऊ है और शंकर उसकी रखवाली करने वाला श्वान। यदि चोरी-चमारी श्वानों के पाल लेने से समाप्त हो सकती तो सरकार पुलिस न रख कर श्वानशाला खोल देती और जनता घर के द्वार खुले रख कर चैन से सोती।

बुद्धिमान चोर जिस घर में चोरी करने का बीड़ा उठाते हैं उस घर के श्वान से पहले ही याराना गाँठ लेते हैं।

गोरी के प्रेम के एक लोभी चोर ने भी शंकर से दोस्ती बढ़ा ली थी। और एक रात जब गोरी अपने कमरे में सो रही थी या शायद सोने की चेष्टा में अपने बिस्तर पर करवटें बदल रही थी, बाहर सड़क पर सन्नाटा था। रात गहरी होकर धीरे-धीरे भोर की ओर जा रही थी। और गोरी उस व्यक्ति के बारे में विचार कर रही थी जो उसका सर्वस्व था। वह दे गया एक वेदना और ले क्या गया—वह भी केवल वेदना ही लेकर गया था।

* * *

गोरी के द्वार पर कोई खटका सुनाई दिया। गोरी ने द्वार की ओर देखा। अंधेरे में उसकी दृष्टि कुछ देख न पाई। दरवाजे के ऊपर के रोशनदान पर कुछ खट हुई और फिर धड़ से गोरी का दरवाजा खुल गया।

वह उठकर बैठ गई। किसने द्वार बन्द किया—"कौन ?" गोरी ने हड़बड़ा कर प्रश्न किया। उत्तर में कमरे की बत्ती जल उठी। सामने यशपाल खड़ा था। गोरी अवाक् सी रह गई। उसकी कल्पना प्रत्यक्ष हो गई थी।

गोरी चकित होकर थोड़ी देर पाषाण हो गई। यशपाल भी स्तब्ध रहा। जब दो प्रेमी मिलते हैं तो पहले क्षणों में प्रेम स्वयं प्रकट होकर मौन भाषा में कुछ कहता है जिसकी धूनी पर प्रेमी हृदय सेवन करने लगता है। बुद्धि उनको छोड़कर चली जाती है या सो जाती है—पता नहीं। किन्तु इसका अनुभव है कि प्रेमी का सम्पूर्ण शरीर हृदय बन जाता है।

स्थूल शरीर के साथ एक ज्योत्सना उज्ज्वल सी हो उठती है और दृष्टि एकटक उस ज्योत्सना के दर्शन करते-करते नहीं अघाती थकती।

गोरी यशपाल को निहारती रही। यशपाल ने एक कदम आगे बढ़ाया और बोला—"मेरे पास वक्त नहीं है। मैं चाहता हूँ कि जीवन भर तुम्हें ही देखता रहूँ। पर अब मैं अपनी इस इच्छा को पूरा नहीं कर सकता। मेरी किस्मत ने मेरी जीवन की राह मोड़ दी है। मैं इस बात को अब समझ गया हूँ कि जीवन धन के बिना अधूरा है। और धन इस युग में छीना जा सकता है, कमाया नहीं जा सकता। आदमी अपनी कोई भी साध बिना दौलत के पूरी नहीं कर पाता और इस वातावरण में आदमी के पास साधों के सिवा कुछ बचा नहीं है।

केवल साधों को सीने से लगाकर जीना व्यर्थ है। मैं साधों की पूर्ति करने के लिए जीना चाहता हूँ।

तुम्हारे प्रेम ने मुझे एक रास्ता दिखाया है। मैं उस रास्ते पर चल निकला हूँ और क्योंकि तुम्हारे कारण मैंने यह सब पाया है—इसलिए तुम्हारे अर्पण करने को यह लाया हूँ।"

इतना कह कर उसने अपने कोट के मारे जेब खाली कर दिये। सौ-सौ के नोटों के कई बण्डल फर्श पर गिर कर बिखर गये।

गोरी पलक झपकते ही उठकर यशपाल की ओर लपक गई और जाकर उससे लिपट गई। यशपाल थोड़ी देर उसके मुख की ओर देखता रहा। उसका मन गोरी से लिपट रहा था किन्तु उसका शरीर अभी तक द्वन्द्व में उलझ-उलझ कर बच रहा था। यशपाल ने कहा—

"गोरी ! मैं अब तेरे लायक नहीं हूँ। मैं एक अपराधी गुनहगार। सरकार और समाज का अपराधी। पुलिस मेरे पीछे है। मैं इस वक्त सिर्फ यह कहने आया हूँ कि मेरी तुम्हारी शादी नहीं हुई। मेरे प्रेम में कभी लेश मात्र वासना नहीं थी। विधाता जिसने मेरे मन में प्रेम दिया था वह जानता है या मैं जानता हूँ और कोई नहीं जानता। मेरा प्यार तो तेरे योग्य है और रहेगा पर मैं तेरे योग्य नहीं।" इतना कहते-कहते उसने गोरी को अपनी बाँहों में कस लिया। किन्तु गोरी की दोनों बाँहें जिन्होंने यशपाल को पकड़ा था वे ढीली पड़ गईं। यशपाल ने उसके कान के पास अपना मुँह ले जाकर कहा—"गोरी तुम्हें मेरे प्यार की कसम है तुम अपना ब्याह कर लो और मुझे भूल जाओ। बोलो तुम्हें मंजूर है न ?"

पर गोरी ने कोई उत्तर न दिया। उसका शरीर ढीला पड़ गया। वह यशपाल के शरीर का स्पर्श करते ही मूर्छित हो गई थी। यदि

यशपाल उसे अपनी बाँहों में न जकड़ लेता तो वह उसके पाँवों में गिरी पड़ी होती। पर उसका शरीर अपने प्यार के सहारे खड़ा था।

गोरी का उत्तर न पाकर यशपाल फिर बोला—"गोरी बोलो! बोलो गोरी!!" उसका स्वर भारी होता गया। और फिर एकाएक बाहर सीढ़ी पर किसी के चढ़ने की आवाज़ आई।

दरवाजा खटकने लगा, और पुलिस की सीटी बज उठी। यशपाल ने गोरी को छोड़ दिया।

गोरी यशपाल के पैरों में बिखरे हुए नोटों पर यूँ गिर पड़ी जैसे भोर होते ही धरती पर पारिजात के फूल बिखर जाते हैं।

पुलिस द्वार तोड़ कर भीतर आ गई।

यशपाल खिड़की से भाग गया था।

पुलिस ने रुपये को अपने अधिकार में ले लिया। पंतीस हजार रुपया था। वह रुपया ले गई और गोरी यशपाल के बारे में उन्हें कुछ भी न बता सकी।

●

१८

इस घटना के बाद यशपाल को बम्बई में रहने का साहस न हुआ। वह कहीं बाहर चला गया। शंकर भी उसके साथ ही था।

रात के आखिरी पहर में एक छोटे से रेलवे स्टेशन की बेंच पर यशपाल बैठा सिगरेट पी रहा था। शंकर कहीं गया हुआ था, और वह उसी की प्रतीक्षा कर रहा था। अब उसे नया अड्डा बनाना होगा, किसी नये शहर में जाकर नये सिरे से अपना कारोबार शुरू करना होगा। बम्बई की पुलिस बहुत चालाक है। वह अपराधी को पकड़ने के लिए समुद्र तक को खँगार डालती है।

आज गोरी भी उससे मिली। गोरी के लिए उसके मन में इतना प्यार है कि आज अपने को 'शूट' करा देने में भी उसने कोई हानि नहीं समझी। अगर वह बम्बई में रहेगा तो गोरी से अवश्य ही मिलने की चेष्टा करेगा और फिर किसी न किसी दिन पुलिस गिरफ्तार करके कानून के हाथों में सौंप देगी। आज गोरी मूर्छित क्यों हो गई? यह प्रश्न उसके मन में उठ खड़ा हुआ। वह चोरों, डाकुओं और अपराधियों के मन की दशा को खूब समझता था कि किस समय वह कैसा बर्ताव करते हैं। पर नारी के मन को वह नहीं जानता था। नारी उसके लिए एक विचित्र वस्तु थी। वह कभी-कभी अपनी वासना

की पूर्ति के लिए गाने वालियों के यहां जाता, किन्तु उसके मन को सन्तोष नहीं मिलता था। उसने कई बार यौवन और सुन्दरता की कलियों का स्पर्श भी किया, पर उनमें उसे केवल एक मात्र घृणा का अनुभव होता। उसे यह सब वासना और पाप का सागर-सा जान पड़ता। यह भावना उसे रस या आनन्द का अनुभव न करने देती। वह आनन्द जो गोरी के स्पर्श से उसे मिला था, वह एक चुम्बन उसके जीवन की एक यादगार था। उसने उन दिनों में जब वह गोरी के साथ घूमता था तो भी ऐसा अनुभव नहीं किया। पर उन दिनों तो स्पर्श का अवसर ही नहीं आया। गोरी के प्यार में कितना आनन्द है। यदि वह मूर्छित न होती, तो उसे भी अवश्य ही आनन्द मिलता। इस स्पर्श से उसे कोई घृणा, कोई वेदना नहीं मिली थी।

उस क्षण के आनन्द को याद करके वह मुस्कुरा दिया, और फिर यह सोचकर कि अब उसके जीवन में यह तरंग नहीं आयेगी, एक लम्बा श्वास छोड़कर चुप हो गया। उसने सिगरेट का एक लम्बा कश लिया और आकाश की ओर देखने लगा। अनन्त में अनन्त तारे हंस रहे थे। इनमें उसकी किस्मत का तारा कौन सा है? उसने मन में सोचा। और फिर उसके मन ने कहा—'जो स्थिर नहीं है, एक जगह से दूसरी जगह जो भाग रहा है।'

शंकर ने आकर कहा—"साहिब! वह काम नहीं बना। इस जगह अपने को जो जानने वाला था वह थाने में गयेला है। पुलिस ने उसको पकड़ेला है।"

यशपाल उठ खड़ा हुआ।

"क्यों साहिब? अब किधर जाने का है?"

यशपाल ने उसके प्रश्न का उत्तर नहीं दिया और जेब से नोट निकाल कर बोला—"दो थर्डक्लास के टिकट दिल्ली के लाओ।"

शंकर ने पूछा—"इतनी दूर जायेगा साहिब, दिल्ली हमने देखा नहीं !!"

"मैं तुम्हें दिखा दूँगा।"—और शंकर के उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना ही दूसरी ओर बढ़ गया।

शंकर थोड़ी देर तो नोटों की ओर देखता रहा और फिर टिकट लेने चला गया।

१६

●

चन्द्रमोहन जब से सोफ़िया के गेस्ट-हाउस से निकला है फिर लौट कर नहीं आया। गोरी को जिस रूप में वह देखना चाहता था उसकी धारणा गोरी के प्रति न बदल सकी, किन्तु गोरी की अटलता ने चन्द्रमोहन की भावना बदल डाली। जैसे आतिश-बाज़ की हवाई एक बार आकाश की ओर खूब जोर से उड़ जाती है और आकाश को छूने की चेष्टा में अपना उत्साह छोड़कर जब फटती हैं तो फिर धरती की ओर लौट आती है, इसी भाँति चन्द्रमोहन भी जब गोरी के प्रेम-आकाश को न छू सका तो पलट कर धरती की ओर लौट आया। उसे कोई आसरा चाहिए था। टूटा हुआ दिल कोई ठौर चाहता है। लक्ष्य-हीन प्राणी कोई ठिकाना खोजता है। घोंसले तक न पहुँच कर पक्षी रात को किसी भी शाख पर बसेरा कर लेता है।

चन्द्रमोहन को सुमित्रा की बाँहों में आसरा मिला।

चन्द्रमोहन गेस्ट हाउस से निकल कर एक होटल में चला गया और एक दिन उसी होटल के रेस्टोरेण्ट में उसकी मुलाकात सुमित्रा से हो गई। गोरी के चाचा की बेटी—सुमित्रा।

"हैलो!" सुमित्रा ने बुलाने में पहल की।

"हेलो।" टूटे हुए दिल से चन्द्रमोहन ने सुमित्रा की 'हेलो' का स्वागत किया। लेकिन यह गोरी के चाचा की बेटी है जिसके गाल पर तिल नहीं, बाजू पर तिल है।

सुमित्रा ने बिना बाहों वाला कुरता पहन रखा था। नीचे छोटी मोरी की शलवार थी। उसकी गोल-गोल गोरी बाहें जवानों को आकृष्ट कर रही थीं। चन्द्रमोहन को बाजुओं ने तो आकृष्ट न किया किन्तु उस मोटे से एक तिल ने बाँध लिया; और फिर दोनों मेज़ पर बैठकर चाय पीते रहे। किसी ने गोरी के बारे में बात नहीं की।

इसके बाद वे प्रायः मिलते रहे—रेस्टोरेण्ट में, सिनेमा घर के बाहर, पार्क में। और फिर चाचा के घर भी।

चन्द्रमोहन मालदार बाप का बेटा है। इञ्जीनियर होने वाला है। सुमित्रा के लिए यह बात बहुत बड़ी थी। और चन्द्रमोहन को तो बस एक शाख़ चाहिए थी। टहनी, जिसमें दो फूल न हों तो न सही, हरे पत्ते ही काफी हैं। हवा के चलने से उन पत्तों की लहर ही उसके लिए सुखदायक होगी। और हवा चली। एक बार नहीं, अनेक बार।

एक दिन चाची रोती-धोती गोरी के पास गेस्ट-हाउस में आ पहुँची। मालूम हुआ सुमित्रा गायब है, और उसको विश्वास है कि वह चन्द्रमोहन के साथ भाग गई है। इसी गोरी को एक दिन चाची इसीलिए घर से निकाल रही थी कि उसकी बेटी का चाल-चलन न बिगड़ जाय, पर आज वही गोरी के सामने रो-रोकर अपने मन की व्यथा कह रही थी—

"बेटी अगर तू घर में रहती तो आज यह नौबत न आती। तेरे प्रेम की भक्ति को देखकर उसे शिक्षा मिलती। वह ब्याह कर लेती तो मुझे कोई दुःख न था। वह भाग क्यों गई? दोष मेरा है।"

"माँ-बाप का ही दोष होता है। आज के माँ-बाप बच्चों को शिक्षा तो दिलवाते हैं, लेकिन उन्हें अच्छे-बुरे की पहचान नहीं कराते। लड़कियाँ बाहर घूमती हैं, लड़कों के सम्पर्क में आती हैं, यदि उनको यह पहचान हो कि अपने प्रेम के फूल कहाँ और क्योंकर अर्पण करने चाहिए तो यह जो आज वासना का नाम प्रेम, और पाप का नाम इश्क रख दिया गया है, यह सब बदल जाय। मैं बेटी को हमेशा यह कहती थी—यह मत करना। ऐसा तुम्हें नहीं करना चाहिए।

"लेकिन क्या करना चाहिए? यह उसे कभी नहीं समझाया। अगर मैं उसे कह देती, यह समझा देती कि कुमारी का प्रेम विवाह के बिना वैराग्य बन जाता है और फिर पाप बनकर नारी का सर्वस्व ले जाता है, तो आज यह बात न होती।"

गोरी चाची की बात सुनकर बड़ी दुःखी हुई। चन्द्रमोहन ऐसा नीच हो सकता है, वह उसे ऐसा नहीं समझती थी। अब गोरी क्या करे? अभी तक तो वह केवल यशपाल को ढूंढ़ रही थी। अब सुमित्रा को भी ढूंढ़ना पड़ेगा और चन्द्रमोहन को भी, जिसको उसने राखी बांधी है।

उस दिन चाची देर तक रो-धोकर अपने घर चली गईं।

* * *

रात के दो बजे सुमित्रा ने गोरी के गेस्ट-हाउस में प्रवेश किया। उसके बाल बिखरे हुए थे, और मुख मलीन हो रहा था। रात इतनी काली नहीं थी जितनी काली परछाइयाँ उसके मुख पर काँप रही थीं।

गोरी थोड़ी देर उसकी ओर निहारती रही। जाने गोरी के मन

में क्रोध था या सुमित्रा के प्रति उसके मन में दया आ रही थी, जो दो मिनट तक वह कुछ बोल न सकी। फिर उसकी आँखों से दो आँसू टपक पड़े। उसने कहा—"सुमित्रा।" और उसे खींच कर अपनी छाती से लगा लिया।—"सुमित्रा, यदि तू ने उसे मन से पति स्वीकार कर लिया है, तो यह पाप नहीं है। और अगर यों ही तूने खेल खेला है तो संसार में अब तेरा ठिकाना भूल को सुधार कर ही हो सकता है।"

सुमित्रा बोली—"पर दीदी, अब वह मुझे स्वीकार नहीं करता।"

"कौन ?"

"जिसने मेरा सब कुछ नष्ट कर दिया है।"

"तुझे तेरी कुबुद्धि ने नष्ट किया है पगली। नारी को कौन नष्ट कर सकता है ? वह जब तक अपना सर्वस्व किसी को अर्पण नहीं कर देती उसका कल्याण नहीं होता। किन्तु यह सब वह बचाकर किसके लिए रखती है ? उस एक को अर्पण करने के लिए जो उसका सब कुछ होता है। तूने जिसे दुनिया में सब कुछ मान लिया है, वह क्या तेरा अनिष्ट चाहेगा ? कभी नहीं। जिस तरह भगवान संसार का अनिष्ट नहीं करता, उसी तरह तेरा संसार तेरा भगवान क्यों नष्ट करेगा ? तू मुझे बता वह कौन है ?"

"चन्द्रमोहन···दीदी ! वह हत्यारा है, जो पहले तेरी हत्या करना चाहता था। तू तो बच गई पर उस कसाई ने·····।"

गोरी ने उसके मुँह पर हाथ रख के कहा—"सुमित्रा ! वह मेरे भैया हैं। वह ऐसा नहीं कर सकते। वह कभी ऐसा नहीं करेंगे।"

सुमित्रा फूट कर रो पड़ी—"दीदी, वह तेरा भाई नहीं है। तू

मुझे ज़हर ला दे दीदी, और अब मेरे लिए कोई रास्ता नहीं है।"
इतना कहते ही वह फर्श पर लेट गई।

गोरी ने उसका सिर उठाकर अपनी गोदी में रख लिया और उसके आंसू नहीं पोंछे, उसे पुचकारा भी नहीं, केवल उसके सिर पर अपना दायाँ हाथ रखकर बैठ गई।

सोफ़िया अपनी बहू के कमरे में ही बैठी थी। वह बैठी यह सब तमाशा देखती रही। उसे अपनी बहू पर एक प्रकार का गर्व हो गया। उसकी गोरी इस रोने वाली लड़की की तरह 'फुलिश' नहीं है। वह प्यार में भी एक सीमा से आगे नहीं बढ़ी। कैसी समझदार है उसकी गोरी ?

जब सुमित्रा अपने पेट पर मुक्के मारने लगी तो गोरी ने उसके दोनों हाथ पकड़ लिये। सुमित्रा मूर्छित-सी हो गई।

...रात बीत चली थी। आकाश में पूर्व से सूर्य्य देवता अपनी ज्योत्सना लेकर उदय हो रहे थे और संसार को जगमगाने लगे। किन्तु सुमित्रा के मन की कालिमा किसी तरह न मिटी।

●

२०

●

"चन्द्रमोहन यहाँ नहीं है।" होटल के व्वॉय ने गोरी से कहा।

"कहाँ गया है ?"

"पता नहीं।"

वह होटल से वाहर निकलने लगी तो उसे चन्द्रमोहन के नाम की चिट्ठी लेटर-वोर्ड पर नज़र ग्राई। गोरी ने वह चिट्ठी उठा ली। यह चन्द्रमोहन के किसी मित्र की थी, और उसे उसने लिखा था 'तुम चन्द दिनों के लिए यहाँ ग्रा जाग्रो, तुमने वादा भी किया था। मैंने तुम्हें एक तार भी दिया पर तुम नहीं ग्राये। पत्र को पढ़ते ही चले ग्राग्रो।'

गोरी ने वह पत्र जेब में रख लिया और उसी दिन वह बम्बई से सुमित्रा को लेकर गाड़ी पर रवाना हो गई।

गोरी ने देहली के स्टेशन पर उतर कर किसी और जगह जाना मुनासिब न समझा। वह सीधी चन्द्रमोहन के उसी दोस्त के पास जा पहुँची जहाँ चन्द्रमोहन ठहरा हुग्रा था। गोरी को देखकर चन्द्रमोहन चौंक गया। उसके विस्मय का ठिकाना नहीं था। गोरी उसकी खोज में यहाँ तक ग्रा पहुँचेगी; उसे विश्वास नहीं था। किन्तु सुमित्रा को देखकर उसका जी चाहा कि वह गोरी को भी पहचानने से इन्कार कर

दे, पर वह यह न कर सका। मगर जिस बात का इल्ज़ाम सुमित्रा चन्द्रमोहन पर लगा रही थी उससे साफ़-साफ़ इन्कार कर दिया। उसने कहा—

"यह पाप सुमित्रा का है, मेरा नहीं। मैं इसको अपने सिर लेने को तैयार नहीं।"

सुमित्रा झल्ला गई। वह मरने-मारने को तैयार हो गई। लेकिन गोरी सुमित्रा का हाथ पकड़ कर वहाँ से निकल आई और आते हुए उसने चन्द्रमोहन से कहा—"भैया, जिसे आदमी पाप समझता है उससे छुटकारा पाने के लिए ही झूठ बोलता है, लेकिन एक नया पाप और करता है, फिर भी उसका पिण्ड नहीं छूटता।"

चन्द्रमोहन बोला—"पाप क्या है ? कुछ नहीं !!"

गोरी बोली—"यदि तुमको ऐसा ही अनुभव हुआ है तो तुम्हें पाप लगेगा। और अगर तुम्हारे अन्तःकरण में कोई ग्लानि उत्पन्न हो रही है और संस्कार-वश अवश्य ही हो रही होगी, तो मुख पर घूँघट ओढ़ लेने से आँखों की रोशनी मिट नहीं जाती। घूँघट के अन्दर से ही आँखें झाँक कर देखती रहती हैं कि कोई मेरी ओर तो नहीं देख रहा है। सूरज के प्रकाश को जिस तरह हाथ से टोक कर रोका नहीं जा इसी प्रकार अन्तःकरण की आवाज़ को दबाया नहीं जा सकता, और उसकी एक दलील तुम्हारा यह झूठ भी है। यदि तुम इसे पाप न समझते तो इससे इन्कार न करते।

"मैं तुम्हारे भाव को भले ही न समझ सकी हूँ; पर मैं नारी हूँ। नारी के भाव को समझने में धोखा नहीं खा सकती। नारी इतनी मूढ़ नहीं हो सकती कि अपने अन्तःकरण को दुःखी करके केवल शरीर के पालन-पोषण के लिए, संसार की वाहवाही की खातिर जीवन भर

एक रोग अपने माथे मढ़ ले। इस तरह उसको उतना ही दुःख होता है, जितना बकरे को कसाई की छुरी से।

"पर तुम पुरुष हो। जो नहीं खाते, खाना नहीं चाहते, कभी-कभी भूख से व्यग्र हो करके भी खा लेते हैं।"

चन्द्रमोहन का दोस्त पास बैठा यह बातें सुन रहा था। वह हर वाक्य पर गोरी को चकित होकर देखता था; जो नारी और पुरुष के अन्तरिक्ष का परिचय दे रही थी।

चन्द्रमोहन निरुत्तर हो गया। कमरे में थोड़ी देर स्तब्धता रही। गोरी चौखट के बाहर खड़ी जाने को तैयार थी। सुमित्रा बाहर ताँगे में बैठ चुकी थी। वह सोच रही थी कि 'अब संसार में इस भूल को सुधारने का यही तरीका है कि मुझे मौत को गले लगा लेना चाहिए। मैं इस कलंक को धोने के लिए यमुना में डूब जाऊँगी। अब बम्बई लौट कर नहीं जाऊँगी।'

लेकिन चन्द्रमोहन के दोस्त ने ताँगे से सामान उतरवा लिया। उसने गोरी और सुमित्रा को जाने नहीं दिया।

उस दिन शाम को चन्द्रमोहन गोरी के पाँव पकड़ कर रो पड़ा। तीसरे दिन चाचा और चाची भी आ गये। सुमित्रा और चन्द्रमोहन का व्याह हो गया। पाप को गोरी ने पुण्य बना दिया, भूल को उसने एक चमत्कार का रूप दे दिया।

●

२१

शादी बड़े धूम-धाम से हुई। दिल्ली की एक तवायफ़ नाचने के लिए आई, नाम था चन्द्रावली। रूप-रंग में जितनी सुन्दर थी, गाने में भी अनोखा रंग था। दिल्ली के लोग उस पर टूट पड़ते थे। चन्द्रमोहन के घर वाले अमीर थे, इसलिए खूब खुशियाँ मनायी गईं।

जब चन्द्रावली नाच-गाकर घर से बाहर निकली तो मर्दों की भीड़ भी एक प्रकार से बाहर की ओर चली गई। दालान खाली हो गया। इस उजड़ी हुई महफ़िल में जमीन पर एक सोने की अँगूठी गिरी हुई मिल गई। इस अँगूठी को गोरी ने उठाया। वह घर वालों को देना ही चाहती थी कि अँगूठी के ऊपर का नग खुल गया। अन्दर एक शीशा लगा था और शीशे के पीछे यशपाल की तस्वीर थी।

गोरी इस तस्वीर को देख कर दंग रह गई। यह अँगूठी यशपाल की है। क्या वह यहाँ आया था? इस मजलिस में वह भी मौजूद था? इस भीड़ में वह बैठा भी रहा और चला भी गया। मैं कितनी अभागिन हूँ। लेकिन यदि यशपाल यहाँ आया था, तो अवश्य ही मुझसे मिलने आया होगा। उसे मालूम हो गया होगा कि मैं दिल्ली

चली आई हूँ। वह बम्बई से मेरी खोज में दिल्ली आ गया होगा। उसने यह सब सोचकर, यह भी समझ लिया कि वह इस समय भी घर के भीतर ही कहीं है और यह अंगूठी अपने यहाँ होने के चिन्ह रूप में फेंक कर चला गया है ताकि मैं उसकी खोज करूँ। यह सोच कर उसने सारे घर में ढूंढना शुरू किया। हर कमरे में, हर दालान में, हर कोठरी में, बाहर बँगले के 'लॉन' में, हर वृक्ष के नीचे वह यशपाल को खोजती रही।

अन्दर सब लड़कियाँ गीत गा रही थीं। विवाह का वातावरण अभी घर पर छाया हुआ था।

*　　　*　　　*

दोपहर को लोग खाना खाने बैठे तो तवायफ़ चन्द्रावली के तबलची ने आकर घण्टी बजाई।

चन्द्रमोहन ने पूछा—"क्या बात है खान साहब ?"

खान साहब चन्द्रावली के साथ तबला बजाते थे। यही उसके उस्ताद भी थे। तवायफ़ों के उस्ताद उनके सब कुछ होते हैं। नौकर भी, बावरची भी, गुरु भी और कभी-कभी बाप भी। उस्ताद जी ने कहा—"हज़ूर ! मैं चावड़ी बाज़ार से हाज़िर हुआ हूँ। रात जो बाई गाने के लिए आई हुई थी, उसकी एक अंगूठी कहीं गिर गई है। अगर किसी को मिली हो तो पूछकर दिलवा दीजिये।"

चन्द्रमोहन ने कहा—"नहीं, अँगूठी किसी को नहीं मिली।"

रात को उस्ताद जी की महफ़िल में जो क़दर थी, अब महफ़िल उजड़ जाने के बाद उनकी क़दर भी गायब हो गई थी। चन्द्रमोहन दरवाज़ा बन्द करके अन्दर डाईनिंग रूम में खाना खाने की मेज़ पर आ बैठा।

गोरी के पूछने पर उसने बताया कि खान साहब थे, और कहते थे कि रात बाई की अँगूठी गिर गई है।

गोरी चौंक पड़ी, बोली—"फिर तुमने क्या कहा ?"

"यही कि अँगूठी यहाँ नहीं गिरी।"

गोरी कहने जा रही थी कि 'अँगूठी गिरी थी और मुझे मिली है, लेकिन उसके नगीने के नीचे यशपाल का चित्र है। सुमित्रा यशपाल को पहचानती है।' जाने ये लोग क्या समझने लगें, और फिर वह चुप ही बैठी रही।

आज वह दोपहर का खाना भी न खा सकी। सोचती रही जाने क्या ? शायद यह कि गाने वाली क्या मुझसे अच्छी है जो यशपाल की अँगूठी उसके चित्र के साथ उसके पास है।

* * *

"आपकी यह अँगूठी मुझे मिली है।" गोरी ने चन्द्रावली के मकान पर जाकर उसके सामने अँगूठी रखते हुए कहा।

चन्द्रावली ने अँगूठी ले ली और गोरी के मुख की ओर देखने लगी। चन्द्रावली का मन गोरी के उपकार से भर गया। उसने कहा—"मुझे आपने अँगूठी नहीं दी, मेरा हृदय लौटा कर दिया है।"

"जी ?" गोरी इतना सा ही उत्तर देकर चुप हो गई।

गोरी को चन्द्रावली ने बिठाते हुए कहा—"मैं तवायफ़ हूँ। बीसों लोग यहाँ आये, हज़ारों-लाखों का ज़ेवर दे गये, और मैंने किसी की परवाह नहीं की। मगर इस अँगूठी के गुम हो जाने पर अन्तिम पल तक मेरी पलक नहीं झपकी। खुली आँखें रात्रि के अन्धकार को देखती रही। इस अँगूठी के लिए क्या मिन्नतें मानी हैं। गंगा मैया का प्रसाद, हनुमान चालीसा का पाठ, जमुना जी का स्नान, हरे-भरे पीर की मजार

की चादर और निज़ामुद्दीन का फेरा। कुछ पूछिये नहीं। आपने तो मुझे मेरे प्राण वापस कर दिये।"

गोरी अपने भावों को दवा कर बोली—"आपकी चीज़ आपके हवाले कर दी है। मैंने क्या किया है?" किन्तु इतना कहते-कहते गोरी की आँखें छलछला आईं।

चन्द्रावली का मुख खिल गया था और गोरी का मुख मलीन हो रहा था। चन्द्रावली के गाल पर मुस्कुराने से एक गढ़ा-सा पड़ता था और ठोड़ी पर एक तिल था, वह भी निखर गया। गोरी के गाल का तिल फीका पड़ गया। उसने साड़ी के आँचल को सिर पर ठीक से बिठाया जैसे यशपाल के इस कर्म पर उसको लज्जा-सी आ गई हो और अपने आँसुओं को दबाकर मुस्कुराने की चेष्टा करते हुए बोली—"यह अँगूठी आपने कहाँ से बनवाई है?"

"बनवाई? नहीं-नहीं, इस कोठे पर बैठकर मैं ज़ेवर क्यों बनवाने लगी। यह तो मुझे किसी ने दी थी, और जिसने दी थी उसको मैंने अपने मन में बिठा लिया है।" इतना कहकर चन्द्रावली हँस पड़ी।

"अच्छा मैं चलती हूँ।" गोरी उठने लगी। वह चन्द्रावली की इस विजयपूर्ण हँसी को सहन न कर सकी।

चन्द्रावली ने उसका हाथ पकड़ कर बिठा लिया और बोली—"मेरे घर पर कोई स्त्री आज तक नहीं आई। मेरा मतलब है शरीफ़ घराने की स्त्री। आज आप आई हैं और मेरा ही स्वार्थ लेकर आई हैं; इसलिए इस तरह तो मैं आपको जाने नहीं दूँगी। कुछ खा-पीकर ही जाइयेगा।" इतना कहकर उसने अपनी नौकरानी को चाय बनाने का हुक्म दिया।

गोरी बैठ गई। वह जाना भी नहीं चाहती थी, क्योंकि अभी उसे यशपाल के बारे में बहुत कुछ जानना था। वह कहाँ है, कैसा है?

गोरी की तरह क्या उसने इस तवायफ़ को मन में बसा लिया है या नहीं। वह गोरी को 'पूछता' भी है या नहीं।

चाय आने तक गोरी और चन्द्रावली बातों में उलझी रहीं।

गोरी ने कहा—"आप लोगों के पास क्या गुण है जो लोग अपने घरों को छोड़कर यहाँ आते हैं?"

चन्द्रावली ने मुस्करा कर कहा—"यह तो गुप्त विद्या है, इसको मैं क्योंकर बताने लगी? लेकिन आपको बता दूँगी। बात केवल इतना-सी है कि हमें लुभाना आता है और घर की नारियों को लुभाना नहीं आता। मर्द सारे दिन की मेहनत के बाद घर आता है। आप लोग उनसे अपने दुःख की बात करती हैं और हम लोग सिवा प्यार के कुछ नहीं जानतीं।"

"प्यार! यह प्यार तो झूठा होता है।" गोरी ने बात काट कर कहा।

"झूठा ही सही। जिसे सोना नहीं मिलता, उसे जब पीतल देकर सोने का आभास करा दिया जाता है तो वह उसी में सन्तुष्ट हो जाता है।

"मैं इस अँगूठी देने वाले मर्द के बारे में ही बताती हूँ कि उसने प्यार की झलक कहीं देखी थी। फिर उसका प्यार उससे छिन गया लेकिन उसे चैन नहीं था, जब यहाँ आया तो तड़प रहा था। उसके मुख पर कई प्रकार के दुःखों की परछाइयाँ थीं। पर जब मैंने उसकी छाती पर हाथ रखा तो उसे शान्ति मिल गई। उसने मेरी ठोड़ी के तिल को प्यार करके कहा, 'यह तिल मेरे जीवन का बिन्दु है'।"

यह बात सुनकर गोरी का मुख एक बार उज्ज्वल हो उठा और वह धरती की ओर देखने लगी। बोली—"कौन था वह?"

"दिखाऊँ ? ऐसे व्यक्ति के दर्शन भाग्यवश ही होते हैं।" इतना कह कर चन्द्रावली ने अँगूठी का नगीना खोल दिया। भीतर वही यशपाल की तस्वीर थी—गोरी के यशपाल की।

गोरी इस तरह तस्वीर को देखती रही जैसे वह यशपाल का नया परिचय पा रही हो। यह क्या वही यशपाल है जिसने गोरी के प्यार में एक अपराध किया था ?

चाय आ गई और दोनों चाय पीने लगीं। एक वेश्या थी, प्रसन्न ! और एक सती थी, उदास।

चाय पीते-पीते गोरी मुस्कुरा पड़ी।

"क्यों ? क्या हुआ ? आप हँसने क्यों लगीं ?" चन्द्रावली ने पूछा।

गोरी ने कहा—"मैं सोच रही हूँ यदि आपसे आपकी गुप्त विद्या सीख लूँ तो मुझे यह भय नहीं रहेगा कि कोई उनको मुझसे छीन लेगा।"

"और यदि आपने मुझसे उनको ही छीन लिया तो मैं क्या करूँगी ?" चन्द्रावली ने छेड़ की, और विस्मय भरी आँखों से गोरी की ओर देखने लगी।

"हम लोग केवल अपनी ही वस्तु की रक्षा करना चाहती हैं। किसी का अधिकार छीनना हमारे धर्म में उचित नहीं है।"

चन्द्रावली ने कहा—"सच है ! तो इस विद्या के लिए कठिन तपस्या करनी पड़ेगी।"

"करूँगी।"

"क्या सीखना चाहती हैं आप ?"

"इस विद्या के सब भेद।"

चन्द्रावली ने कहा—"उस गुप्त विद्या का एक अंग यह गाना-नाचना भी है। आइये मेरे साथ, अन्दर आ जाइये।"

दोनों अन्दर चली गईं।

* * *

उस दिन से गोरी ने चन्द्रावली के यहाँ आना आरम्भ कर दिया। वह दोपहर को नृत्य आदि सीखने लगी।

अब ये दोनों सहेलियाँ बन गईं। गोरी चन्द्रावली की सखी थी। वह अपने प्यार की, प्यारे की, हर बात गोरी से कह देती थी। और मन में समझती थी कि गोरी को उसके प्यार की बात सुनकर बहुत सुख मिलता है। पर गोरी के मन की दशा गोरी ही जानती थी।

एक दिन गोरी ने चन्द्रावली से कहा—"ज़रा मुझे दिखाओ तो वही तुम्हारा जसवन्त है कैसा?"

जसवन्त यशपाल का वह नाम था जो उसने चन्द्रावली को बताया था।

चन्द्रावली ने कहा—"दिखाऊँगी।"

"कब?"

"कुछ दिन ठहर जाओ, उनकी आज्ञा मिल जाय तो।"

"आज्ञा की क्या बात है?"

"यह बात तो जसवन्त ही जाने, लेकिन उसने कहा है कभी किसी को साथ लेकर मत आना। खून कर दूँगा, तुम्हारा भी और उसका भी।

गोरी यह बात सुनकर दुःखी-सी हो गई, लेकिन वह यशपाल को देखे बिना, उससे मिले बिना, दिल्ली से नहीं जायगी। यह उसने निश्चय कर लिया था।

२२

●

एक दिन शाम को गोरी चन्द्रावली के यहाँ गुप्त-विद्या का अभ्यास कर रही थी, अर्थात् पाँव में घुँघरू बाँधकर अकेली कमरे में नृत्य कर रही थी। चन्द्रावली कहीं बाहर किसी महफ़िल में गाने-बजाने गई हुई थी।

इतने में दरवाज़े के बाहर किसी ने किवाड़ की कुण्डी खटखटा कर कहा--"बाई जी ! मैं जसवन्त सेठ का ड्राइवर हूँ। नीचे गाड़ी खड़ी है, आपको सेठ ने बुलाया है। वसन्त बाबा नीचे गाड़ी में बैठा है, आप जल्दी से तैयार हो जाइये।"

यह सुनकर गोरी की अजीब दशा हो गई। जसवन्त सेठ ने चन्द्रावली को बुलाया है, और जसवन्त नाम है यशपाल का।

वह क्या करे ? वह थोड़ी देर मौन खड़ी रही, फिर उसने चन्द्रावली का बुरका ओढ़ लिया और बेसुध-सी डोलते पाँव से वह सीढ़ी उतरने लगी। उसके पाँव के घुँघरू खनक रहे थे, किन्तु उनकी खनक गोरी के कानों में नहीं आ रही थी। वह अपने पिया से मिलने जा रही थी।

गाड़ी में जो वसन्त बाबा बैठे थे, गोरी ने पहचाना, वह शंकर है। शंकर दादा, सोफ़िया का भाई। पर वह शराब के नशे में चूर था उसे देखकर गोरी के मन का फूल खिल गया।

शंकर आगे की सीट पर बैठा था, उसने कहा—"आज साहब ने कुछ सेठ लोगों को बुलाया है बाई, तुम्हारा गाना सुनने को। बड़ा-बड़ा सेठ लोग है, खूब रुपया देगा। साला, धरम से डिग गया है···।" और फिर वह बड़बड़ाने लगा। मन ही मन यशपाल को गालियाँ देने लगा।

गोरी कुछ बोली नहीं पर भीतर से उसका मन हिल गया।

× × ×

मोटर जब नई दिल्ली के बाहर आबादी में एक बंगले के सामने खड़ी हुई तब अँधेरा हो चुका था। सड़क पर बत्तियाँ न होने की वजह से चारों ओर घमासान अँधेरा दिखाई दे रहा था।

दरबान ने बंगले का दरवाजा खोला। गाड़ी अन्दर जाकर पोर्च में खड़ी हो गई।

गोरी के पाँव में घुँघरू बँधे हुए थे। वह छम-छम करती हुई धीरे-धीरे भीतर जाने लगी पर उसके कदम भारी हो गये थे। वह स्वयं काँप रही थी मानों उसने शराब पी रखी हो। उसका मुँह तप रहा था, कान लाल हो गये थे और दिल बुरी तरह धड़क रहा था।

शंकर ने भीतर जाकर पुकारा—"जसवन्त सेठ।"

"अरे बसन्त बाबा, तुम्हारा सेठ अभी आता है मगर बाई कहाँ है?"

शंकर दादा थोड़ी देर उस आदमी को घूरता रहा, फिर चौखट से बाहर अँधेरे में खड़ी, बुरके में लिपटी गोरी का हाथ पकड़ कर घसीटा और उनकी ओर ढकेल कर बोला—

"यह रही तुम्हारी बाई! साला इधर रहेगा तो हमें रण्डी का धन्धा करना पड़ेगा। हम भड़ुवा हैं?"

भीतर के आदमी ने शराब का एक गिलास उठाते हुए आवाज लगाई—"यहाँ महफ़िल सूनी हो रही है।" वह यह कहता हुआ बड़-बड़ाते हुए बाहर चला गया।

गोरी का बुरका सर से उतर गया और वह सहमी हुई यों खड़ी हो गई जैसे शिकारियों के चंगुल में फँसी हुई कोई हिरनी। इतने में यशपाल ने कमरे में प्रवेश किया और यह देखकर तड़प गया। उसकी दृष्टि उसके पाँव पर बँधे हुए घुँघरुओं पर पड़ी। एक क्षण के भीतर ही भीतर उसने गोरी को वेश्या, रण्डी, आवारा और न जाने क्या-क्या समझ लिया। उसकी आँखों में खून उतर आया। वह क्षण भर खड़ा देखता रहा—केवल गोरी को। फिर जिस प्रकार शेर गोली खाकर शिकारी पर झपटता है उसी प्रकार यशपाल गोरी पर झपट पड़ा। उसने मुक्का मार कर गोरी को धरती पर गिरा दिया और फिर घसीटता हुआ भीतर कमरे में ले गया। वह बकता जा रहा था।

"वेश्या ! रण्डी !!"

उसने भीतर से दरवाज़ा बन्द कर लिया और गोरी को पीटना शुरू किया।

यशपाल का मुक्का खाकर गोरी बेहोश होकर दीवार से सटक गई। वह गिरने ही वाली थी कि यशपाल ने उसे गरीबान से पकड़ कर खड़ा किया और दाँत भींच कर बोला—"अगर तुझे यही कुकर्म करना था कलंकिनी, तो फिर मेरे साथ क्यों विवाह किया था ?"

गोरी विवाह का नाम सुनकर होश में आ गई। उसके मन को ढाँढ़स हुई कि यशपाल गोरी को अभी तक अपनी पत्नी ही समझता है। गोरी ने अपने दोनों हाथों से यशपाल के कोट का कालर पकड़ लिया। वह सहारा चाहती थी, उसने यशपाल का सहारा ले लिया।

यशपाल ने अब उसे धड़ाधड़ चाँटे मारने शुरू किये। "तू तवायफ़ बन गई है। मैं आज तेरा खून कर दूँगा।" उसका गुस्सा किसी तरह ठण्डा नहीं हो रहा था। वह अपने दोनों हाथों से गोरी का गला दबाने लगा।

गोरी की आँखें बाहर निकल पड़ीं। उसने यशपाल की दोनों कलाइयाँ पकड़ कर गला छुड़ाते हुए कहा—"ज़ालिम ! क्या सचमुच मार ही डालोगे तुम ?"

"मैं तुम्हें ज़िन्दा नहीं छोड़ूँगा।" इतना कह कर उसने गोरी को दीवाल में दबोच दिया।

गोरी ने फिर अपनी गर्दन छुड़ाते हुए कहा—"मैं तवायफ़ तो तुम्हारे लिए बनी थी क्योंकि तुम एक तवायफ़ से प्यार करते थे—चन्द्रावली से—जिसकी ठोढ़ी पर तिल है और जिस पर तुम मोहित हो।"

यशपाल की गिरफ्त ढीली पड़ गई और गोरी चकरा कर धरती पर गिर पड़ी, ठीक यशपाल के पाँव में। दीवार में लगी हुई बिजली की बत्ती उसके मुख पर अपना प्रकाश डाल रही थी और गोरी निश्चल पड़ी उस प्रकाश में सत्य की अचेत मूर्ति-सी जान पड़ती थी। उसके गाल का काला तिल, उसके प्यार के मुख का कलंक, यशपाल के रूप में उसे कलंकित कर रहा था। पर यह तिल ही गोरी की शोभा थी। यही उसका प्यार था, यही उसका सर्वस्व था।

यशपाल थोड़ी देर उसके मुख की तरफ़ देखता रहा। फिर अनजाने में उसके पास ही धरती पर बैठ गया। वह उसके और समीप होने के लिए आगे बढ़ा, पर उसका जी उससे दूर हट जाना चाहता था। उसके कर्म की परछाइयाँ उसके मन पर पड़ रही थीं। उन्हीं

परछाइयों में गोरी काली-सी पड़ गई थी। वह उसे कुल्टा, वेश्या ओर न जाने क्या-क्या समझ रहा था।

यह आरोप हर युग में सती पर लगा है, सती की परीक्षा इसी तरह होती है। वह जिसे भगवान् मानती है, वही उसकी परीक्षा लेता है; वही उसे दुःख देता है। और भगवान् वह किसे मानती है? केवल अपने भाव को। उसका भाव ही उसका पति होता है, उसका विचार ही उसका भगवान् होता है। नारी यदि पुरुष के रूप को प्यार करती है तो यह रूप तो नाशवान् है। सुन्दरता का कोई मान-दण्ड तो है नहीं और फिर आदमी सदा सुन्दर भी तो नहीं रहता। यदि वह पुरुष से अपने स्वार्थ के लिए प्यार करती है तो वह सती नहीं है, क्योंकि स्वार्थ के पूरा हो जाने पर फिर किसी नये की खोज होगी। किसकी खोज? जिसके भीतर अभाव होगा और जब अभाव होता है तो सब खाली होता है। भीतर, बाहर, घर, संसार, धरती, आकाश, उसे पाताल भी सुनसान और स्वर्ग भी दुःख का घर प्रतीत होता है और यदि भाव है तो उसे कोई चीज़ खाली और बेकार नज़र नहीं आती। वह प्यार और प्रेम में सुप्त रहती है।

गोरी आज प्रेम द्वारा प्रताड़ित होकर अपने प्रियतम के चरणों में बेसुध पड़ी थी।

बाहर लोग मार-धाड़ के कारण भाग गये। वह सोचते थे यश-पाल गोरी को मार डालेगा और पुलिस की धर-पकड़ होगी।

रह गया केवल शंकर दादा, जो नशे में बुत था। लेकिन इस मार-धाड़ का शोर सुनकर उसका नशा गायब हो गया। उसने बाहर से दरवाजा खटखटाया, लेकिन यशपाल तो क्रोध में अन्धा हो रहा था। उसे कुछ सुनाई नहीं देता था। शंकर ने जोर लगाकर दरवाजा अन्दर

की ओर ढकेला। किवाड़ न खुला। उसने आवेश में आकर एक धक्का दिया। दरवाजे की कुण्डी टूट गई। दरवाज़ा खुल गया।

शंकर ने देखा अन्दर चन्द्रावली नहीं गोरी है।

शंकर चकित अवाक्-सा खड़ा हो गया। यह कहाँ से आ गई? चन्द्रावली कहाँ गई?

इतने में बँगले में एक ताँगा आकर रुका और चन्द्रावली उतर कर अन्दर आई। वह आते ही कहने लगी—

"तुम्हारा ड्राइवर और तुम्हारा साथी मेरी सहेली को ज़बरदस्ती यहाँ ले आये हैं।" फिर गोरी को धरती पर बेहोश पड़ा देख कर सुन्न हो गई।—"इसे क्या हुआ?"

शंकर ने कहा—"इस साले ने इसे मारा है।"

"क्यों? क्यों मारा तुमने?" वह गुस्से में यशपाल की ओर बढ़ गई।

शंकर बोला—"यह इससे प्रेम करता है, इससे इसका विवाह होयला है।"

"ब्याह?"

"हाँ! हमारा आँख के सामने होयला है। पूछो इस साले से? इन्कारा करने को सकता है?"

अब चन्द्रावली समझ गई। उसने यशपाल के पास जाकर कहा—"यह तुमने क्या किया जशवन्त? यह तुम्हारे ही लिए मेरे घर आती रही। इसने तुम्हारे ही लिए नाचना सीखा। यह अपने प्रेम को छिपा कर तुम तक पहुँचने की कोशिश करती रही। और जब यह पहुँची तो तुमने इसका यह हाल कर दिया; निर्दयी!"

यशपाल अब हैरान होकर चन्द्रावली की ओर देखने लगा। फिर उसने गोरी को अपने बाजुओं में उठा लिया और रोने लगा—"गोरी ! गोरी !!"

शंकर ने कहा—"मर गई ! अब रोता है साला ! खूब रो…… जीवन भर रो ! रोना ही होयगा।"

यशपाल ने गोरी को झंझोड़ा—"गोरी मुझे माफ कर दे।"

वह उसे उठाकर बाहर लाया, फिर जीने पर चढ़ गया और उसे मकान की छत पर लेकर पहुँच गया।

आकाश में चाँद बादलों की ओट से झाँक रहा था।

यशपाल ने कहा—"गोरी ! आज मेरा भी अन्तिम दिन है। मैं भी इस छत से कूद कर प्राण दे दूँगा। हमने प्यार किया है, एक साथ मरेंगे। हमारी अर्थियाँ एक साथ उठेंगी।"

गोरी ने मूर्छित अवस्था से सचेत होते हुए कुछ कहा।

यशपाल की आँखों में चमक आ गई—"गोरी !"

"यशपाल।" गोरी की क्षीण ध्वनि आई।

यशपाल ने उसे वक्ष से लगा लिया।

नीचे चन्द्रावली गुम-सुम सीढ़ी पर बैठी अन्धकार में कुछ खोज रही थी—न जाने अपना जसवन्त या गोरी का यशपाल !

●

२३

●

गोरी का यशपाल और चन्द्रावली का जसवन्त, एक ही व्यक्ति के दो नाम हैं। पर चन्द्रावली और गोरी दो भिन्न-भिन्न प्राणी हैं।

चन्द्रावली दिल्ली की मानी हुई तवायफ़ है, जिसे सारा संसार अपनी वासना की तृप्ति के लिए प्यार करना चाहता है, और वह अपने पेट के लिए अपने शरीर को बेचती है।

गोरी भी एक नारी है, वह भी अपना पेट भरने के लिए अपना परिश्रम बेचती थी और परिश्रम शरीर से भिन्न नहीं हो सकता। फिर वेश्या के लिए समाज में कोई स्थान नहीं? आखिर क्यों? इसलिए कि वह घर नहीं चाहती, 'ज़र' चाहती है (प्रायः लोग ऐसा ही समझते हैं) किन्तु चन्द्रावली जसवन्त से क्या चाहती थी? न ज़र, न घर। जसवन्त उसके जीवन का वह फूल था, जिसको वह प्यार के पानी से सींच रही थी। किन्तु वह फूल तो गोरी का था, और गोरी को मिल गया। मगर गोरी उस फूल को अपने सिर पर सजाकर सरे-आम नहीं घूम सकती थी, क्योंकि उसकी पंखड़ियों पर अपराधों के कई धब्बे पड़े हुए थे, और पुलिस उसकी तलाश कर रही थी। किन्तु चन्द्रावली ने उस फूल की रक्षा की। यशपाल और गोरी को उसने यमुना के किनारे उस मकान में बन्द कर दिया है जहाँ वह

कभी-कभी इस झूठी जिन्दगी से उकता कर कुछ दिनों के लिए चली आया करती थी।

गरमी के दिनों में जब धरती तप जाती है और उसका कण-कण तृप्ति के लिए अपने दूसरे कणों से भिन्न हो जाता है, वह धूल बनकर आकाश की ओर उड़ता है ताकि आकाश के बादल तरस खाकर धरती की प्यास बुझा दें।

ऐसी तीव्र दुपहरी में वृक्ष के नीचे बैठी हुई गोरी से चन्द्रावली ने पूछा—"तुम तो मुझसे विद्या सीखने आई थीं, पर जान पड़ता है मुझे तुमसे विद्या सीखनी पड़ेगी।"

गोरी बोली—"यह विद्या सीखने से नहीं आती, हमारी संस्कृति ने हमारे रोम-रोम में प्रेम की एक उमंग भर दी है। किन्तु एकनिष्ठ प्रेम ही प्रेम होता है। आकाश में चमकती हुई बिजली के समान प्रेम की लहर एक स्थान से दूसरे स्थान पर नहीं जाती। नारी का प्रेम, मन्दिर की ज्योति के समान है। वह सदा भगवान् की मूर्ति के पास ही प्रकाशमान रहता है। अन्तर केवल इतना है कि भगवान् की मूर्ति की स्थापना भक्त के हाथों से होती है, पर नारी अपने मन के मन्दिर में अपने भगवान् की स्थापना अपने हाथों से करती है और ज्योति अपने आप प्रज्वलित हो जाती है।"

चन्द्रावली ने प्रश्न किया—"यदि भगवान् पत्थर का निकल जाय तो ?"

"भावना तो पत्थर की नहीं होती। नारी केवल अपनी भावना से प्यार करती है। जब तक उसकी भावना जीवित रहती है तब तक वह ज्योति प्रकाश देती रहती है। भावना के मिटते ही ज्योति बुझ जाती है और ज्योति के बुझते ही नारी, नारी नहीं रहती।"

चन्द्रावली क्षण भर गोरी के मुख की ओर निहारती रही और फिर उसकी दृष्टि अनन्त आकाश में खो-सी गई। उसने फिर एक लम्बी साँस लेकर कहा—"मेरे ठाकुर तो चोरी हो गये गोरी ! अब यह अकेली ज्योति कब तक जलती रहेगी ?"

गोरी हँस पड़ी और उसका हाथ दबाकर कहने लगी—"ठाकुर की लीला ऐसी ही होती है बहन ! जिससे वह अधिक प्रेम करता है उसे गोकुल में छोड़कर स्वयं सत्यभामा और रुक्मिणी का हो जाता है, किन्तु इस बात को युग-युगान्तर बीत गये, पर आज भी उसके नाम के पहले राधा का नाम लेते हैं। राधा उसकी कौन थी ?"

चन्द्रावली सहसा बोल उठी—"कोई नहीं।"

गोरी ने कहा—"सब कुछ वही थी।"

न जाने चन्द्रावली के मन में क्या आया, वह उठकर कड़कड़ाती हुई धूप में चली गई। और दूर गाँव के ऊँचे-ऊँचे खेतों में खो गई।

यशपाल उसी समय नौकरों की तरह धोती पहने, गले में बण्डी डाले, सिर पर पूरबी टोपी रखे उसी वृक्ष के नीचे आ गया।

गोरी ने उसे देखकर कहा—"तुम कब तक अपना वेष बदलकर इस तरह छिपते रहोगे।"

यशपाल गोरी के पास बैठ गया। कहने लगा—"मेरे मन की हालत तुम नहीं जानती हो। मैं चाहता हूँ कि मैं फिर एक बार बम्बई जाऊँ, उसी तरह अन्नपूर्णा और एलीफेण्टा में हम घूमें, दौड़ें, भागें, मछेरों के यहाँ बसेरा करें।"

गोरी उसका हाथ पकड़ कर खड़ी हो गई। बोली—"चलो ना ! कौन रोकता है ?"

यशपाल ने कहा—"पुलिस जो मेरा पीछा कर रही है। मैं जेल चला जाऊँगा।"

गोरी पास ही पत्थर पर बैठ गई और बोली—'पुलिस नहीं, तुम्हारा पाप तुम्हारा पीछा कर रहा है। भागने से तो पुलिस तुम्हारा पीछा कभी नहीं छोड़ेगी।"

यशपाल बोला—"तुम्हारी बातों से मुझे कभी-कभी ऐसा मालूम होता है कि तुम सी० आई० डी० हो और मुझे गिरफ्तार करने आई हो।"

गोरी आज फिर अपना होंठ दबाकर मुस्कुराई और बोली—"मैं तुम्हें पकड़वाने नहीं छुड़ाने आई हूँ। पर तुम अभी तक अपनी कायरता के आवरण को उतार कर नहीं फेंक सके। प्रेम आदमी को बहादुर बनाता है और वासना कायर ! किन्तु तुम……!"

यशपाल ने उसकी बात काट कर कहा—"तुम ही बताओ मैं क्या करूँ ? क्या अपने आपको पुलिस के हवाले कर दूँ ? तुम खुश हो जाओगी ?"

गोरी ने गम्भीरता से कहा—"यदि जेल में जाने से पाप का प्रायश्चित हो सकता है तो मैं यही सलाह दूँगी कि तुम जेल में चले जाओ क्योंकि पुरुष को निर्भय और निःशंक होना चाहिए।"

यशपाल थोड़ी देर गोरी को घूरता रहा।

गोरी ने मुस्कुरा कर कहा—"तुम्हें मुझ पर नहीं अपने आप पर क्रोध आ रहा है। इस बन्धन पर तुम दुःखी हो रहे हो जो तुम्हें बार-बार वेष बदल कर रहने पर मजबूर कर रहा है। मैं पूछती हूँ, जो जिन्दगी तुम बिता रहे हो, क्या वह जेल से अच्छी है ? जिस तरह चूहे

को बिल्ली का खटका रहता है और वह ज़रा से खटके पर चौकन्ना हो जाता है, उसी तरह तुम्हें बात-बात पर खटका होता है, और किसी भी आदमी को देख कर तुम उसे अपना शत्रु मानने लगते हो।"

यशपाल गोरी की बात सुनकर झुँझला उठा। उसने क्रोध में आकर गोरी के मुँह पर चाँटा मार दिया। और कहा—"तुम चली जाओ। तुम जाओ……।" इतना कह कर वह स्वयं ही मकान के अन्दर भाग गया।

गोरी फटी-फटी आँखों से उसे जाता हुआ देखती रही। उसके दिल में कोई वेदना उत्पन्न नहीं हुई। पर वह मुस्कुराई भी नहीं। वह वहीं बैठी रही।

*　　　*　　　*

धीरे-धीरे सूरज की गर्मी कम हो गई और सूरज पश्चिम की ओट में जाकर छिप गया। रात ने आकाश से उतर कर सारी धरती को अँधेरे में छिपा लिया। यमुना किनारे के मकान के भीतर भी अंधेरा ही रहा। यमुना की लहरें व्यग्रता से किनारों से टकराने लगीं और मकानों के आस-पास के गीदड़ रोने लगे।

गोरी जहाँ बैठी थी, अब भी वहीं बैठी रही।

रात के आखिरी पहर में यशपाल लालटेन लेकर मकान से बाहर निकला और गोरी के पास आकर खड़ा हो गया। वह गुस्से में बोला—'तुम क्या चाहती हो ?"

गोरी कुछ बोली नहीं, केवल देखती रही।

यशपाल ने फिर कहा—"चलो अन्दर।"

गोरी ने कहा,—"नहीं, मुझे वह घर नहीं चाहिए जिसमें रह कर

मुझे यह भय लगा रहे कि कोई मेरे आराध्य को उसकी इच्छा के विरुद्ध लेकर चला जायगा।''

यशपाल उसकी बात नहीं समझ सका। उसने लैम्प धरती पर पटक दिया, जो भभक कर बुझ गया। फिर चारों ओर अंधेरा छा गया। यशपाल गोरी के पास बैठ गया और कहने लगा—''गोरी! मेरी मानो तो तुम बम्बई चली जाओ। मेरा-तुम्हारा साथ मुश्किल है। तुम जीवन की वास्तविकता से आँखें मूँद कर आदर्श के पीछे बावली हो। किन्तु मैं जीवन के तथ्य को समझता हूँ। दुनिया में आदर्शवाद से कुछ हासिल नहीं होता। संसार हमारे सामने है और इसमें वही सुखी रहता है जो कुछ भी करके अपना बचाव कर लेना जानता हो; दूसरों का हक़ छीन लेना जानता हो।

''तुम नहीं जानती; अगर मैं पुलिस के हत्थे चढ़ गया तो मेरे किये गये अपराधों के सिवा और भी बहुत से अपराध मेरे मत्थे मढ़ दिये जायँगे, और यह भी हो सकता है कि किसी खून का अपराध लगा कर सरकार मुझे फाँसी पर ही चढ़ा दे।''

गोरी ने दोनों हाथों से उसके सिर को खींचकर अपनी छाती से लगा लिया। यशपाल रो पड़ा और फिर गोरी भी रो पड़ी। थोड़ी देर चुपचाप दोनों उसी तरह बैठे रहे। चांद आकाश में निकल आया और उसके माध्यम से चाँदनी उनके चेहरों पर पड़ने लगी। दोनों एक हो गये। गोरी यशपाल से इस तरह मिल गई जैसे लता किसी कोमल वृक्ष के तने से मिल जाती है।

× × ×

यमुना शान्त हो गई थी। भोर का तारा आकाश पर उदय हो गया और गोरी तृप्त हो गई। पंछी चहचहाने लगे। भोर की पहली

किरण ने देखा कि यशपाल वहाँ पर अकेला सो रहा है और गोरा वहाँ नहीं है।

यशपाल यमुना की लहरों के कोलाहल से बेखबर, और पास से गुजरने वाले ढोर-ढंगरों के गले की घंटियों के स्वर से अनजान, पंछियों के मधुर संगीत से मुख मोड़े, गहरी नींद में पड़ा रहा। पर जब सूरज की किरणों में अधिक तीव्रता आ गई तब इस तरह जागा जैसे किसी ने उसे झंझोड़ दिया हो। उसने चारों ओर देखा। गोरी कहीं नहीं थी। किन्तु रात के आनन्द का नशा उस पर छाया हुआ था। आज उसे चारों ओर आनन्द ही आनन्द प्रतीत होता था। उसने गोरी को पुकारा, पर गोरी वहाँ नहीं थी। सूरज की किरण का स्पर्श पाते ही जैसे ओस की बूँद फूल पर से उड़ जाती है वैसे ही गोरी वहाँ से अदृश्य हो गई थी।

●

२४

●

"बेटी तुम किधर था ? हमने तुमको बहुत ढूँढ़ा, पर तुम मिला नहीं। शंकर दादा आया था, और हमारा बेटा तो......तुमको क्या बोलेगा। वह एकदम बड़ा "क्रिमिनल" हो गया है।"—सोफ़िया ने गोरी को कई महीनों के बाद अपनी छाती से लगाकर रोते हुए कहा।

गोरी सोफ़िया के आँसू पोंछ कर बोली—"वह 'क्रिमिनल' हो गये हैं मम्मी, तो क्या हुआ ?"

सोफ़िया गरज कर बोली—"क्या हुआ ? तुम हमको बोलता है और क्या होना माँगता है ?"

गोरी ने कहा—"बेटे के बदल जाने से माँ की ममता नहीं बदलती।"

"कैसे नहीं बदलती ?" सोफ़िया और भड़क गई।

गोरी ने मुस्कुरा कर कहा—"मम्मी ! तुम्हारा पति घर से गया और फिर वहाँ से भगवान् के घर चला गया। उसके आने की भी अब कोई आश नहीं। फिर भी तुम उसके नाम पर क्यों जी रही हो ?"

सोफ़िया उसकी ओर आश्चर्यचकित दृष्टि से देखती रही।

गोरी ने बात को जारी रखते हुए कहा—"जो आदमी बिगड़ कर चला जाता है, उसके बदल कर लौट आने की आश होती है। किन्तु जो मर जाता है मम्मी, वह तो लौट कर कभी नहीं आता। फिर नारी किस आश पर बैठी रहती है ?"

सोफ़िया ने खड़े होते हुए कहा—"हम क्या बोलेगा, हम कुछ बोलने नहीं सकता। हमारा 'हस्बेण्ड' का जब 'वार' में 'डेथ' हो गया

तब सब बोला तुम दूसरा शादी कर लो। पर अपने को अच्छा नहीं लगा। अच्छा लगता तो जरूर करता।" इतना कहकर वह स्टोव जलाने लगी।

आज उसका मन खुशी से भर गया था। सारे मुहल्ले में गोरी के आने की सोफ़िया ने धूम मचा दी। मुहल्ले के हिन्दू कहते थे गोरी इस युग की सती है। मुसलमान कहते थे पाक-दामन है। इसाई लोग उसकी 'रेस्पेक्ट' करते थे।

चाचा और चाची भी गोरी से मिलने आये। चाचा तो नीचे सीढ़ी पर ही बैठे रहे। पर चाची ने गोरी से आकर कहा—

"तुम्हारे चाचा तुम्हारे सामने नहीं आते।"

तब गोरी ने जाकर चाचा का हाथ पकड़ कर उन्हें सीढ़ी से उठाया। चाचा रो पड़े, बोले—

"तेरे सारे दुःखों का कारण मैं हूं बेटी!"

गोरी ने मुस्कुरा कर कहा—"चाचा जी! जो मेरे भाग्य में बदा था, वही हुआ। मैं तो बहुत सुखी हूँ। आपने मुझे जीवन का अनुभव दिया है। सुख-दुःख अनुभव की वस्तु है। मनुष्य दुःख में भी सुख का अनुभव कर सकता है। और सुख को भी दुःख समझ कर भोग सकता है।"

चाची ने गोरी से मिन्नत की कि वह उसके घर चल कर रहे। चाचा भी हाथ-पांव जोड़ने लगे। किन्तु गोरी इस बात पर राजी न हुई।

गोरी ने कहा—"मेरी मम्मी अकेली रह जायगी। मैं यहीं रहूँगी। यह घर ही मेरा घर है। मम्मी की सारी जिम्मेदारी मुझ पर है। मुझे भी इस घर में रह कर बहुत कुछ करना है।"

चाचा ने उसको कुछ पैसे देने की कोशिश की। पर गोरी ने पैसे नहीं लिये, और कहा—

"जब मुझे जरूरत पड़ेगी, मैं आधी रात के वक्त भी आकर तुमसे मांग लूंगी।"

२५

●

इस बात को छः महीने बीत गये। मुहल्ले में गोरी के बारे में बहुत सी बुरी-बुरी खबरें फैल रही हैं।

मुहल्ले के मोदी ने पड़ोस के पनवाड़ी से कहा—"इस लड़की का पाँव भारी दिखता है। कुछ गड़बड़ है।"

पनवाड़ी ने कहा—"पाँव, अरे पेट भी भारी दिखता है।"

सोफ़िया को भी कुछ शंका हो रही थी, लेकिन अपने विश्वास के कारण वह गोरी से कुछ पूछ नहीं सकती थी। और गोरी भी अब बाहर कम ही निकलती है। वह कुछ सोचती रहती है, जाने क्या ? पास-पड़ोस की औरतों में भी उसकी चर्चा है।

सुबह-ही-सुबह मोदी ने सोफ़िया का दरवाज़ा खटखटाया।

सोफ़िया ने दरवाज़ा खोला तो देखा मोदी के साथ एक नौजवान लड़का खड़ा है।

मोदी ने सोफ़िया से कहा—"इसको एक कमरा अपने गेस्ट-हाउस में किराये पर दे दो।"

वह लड़का सिगरेट के लम्बे-लम्बे कश लगा रहा था। उसने पहले सोफ़िया को घूरा फिर कमरे के अन्दर झाँका।

सोफ़िया ने मोदी से कहा—"मैंने गेस्ट-हाउस बन्द कर दिया है।"

मोदी ने प्रश्न किया—"क्यों बन्द कर दिया है ?"

सोफ़िया बोली—"हमारा घर में जवान लड़की है, हम अपने घर में किसी को नहीं रखता।"

गोरी ने कहा—"यह शरीफ़ लड़का है। इसकी मैं गारण्ट करता हूँ।"

सोफ़िया ने लड़के की तरफ़ देखा जो अभी तक अन्दर ही झाँक रहा था। सोफ़िया ने उस लड़के का मुँह मोदी की ओर घुमाते हुए कहा—"ऐसे शरीफ़ आदमी को हम अच्छी तरह समझता है।"

मोदी को यह बात अच्छी न लगी। वह बिगड़ कर कहने लगा—"मैं भी तुम्हारी लड़की को अच्छी तरह जानता हूँ।"

यह बात सोफ़िया सहन न कर सकी। उसने मोदी को दरवाज़े के बाहर ढकेलते हुए कहा—"क्या जानता है तू ? इडियट, डुकर।"

मोदी ने चिल्लाना शुरू किया—"मैं क्या सारा बाजार जानता है, सारे लोग जानते हैं, सारी बम्बई जानती है। उसका 'हस्बेण्ड' भाग गया है। पुलिस उसको ढूँढ़ रही है, वह 'क्रिमिनल' है। जाने जिन्दा भी है या मर गया। और तुम्हारी इस बेटी के पेट में बच्चा है। यह बच्चा किसका है ?"

अब सोफ़िया आपे से बाहर हो गई।—"तुम्हारी माँ के पेट में बच्चा होगा।" यह कह कर उसने उसे दरवाज़े से नीचे ढकेल दिया।

मोदी गिर गया और लोग इकट्ठे हो गये।

मोदी चिल्लाये जा रहा था —"देखो जी, यहाँ शरीफ़ लोग बसते हैं, और इसने यहाँ चकला खोल रखा है।"

सोफ़िया जूता उतार कर उसे मारने दौड़ी मगर लोगों ने मोदी को बचा लिया।

गोरी धीरे-धीरे नीचे उतर आई। उसने सोफ़िया का हाथ पकड़ कर कहा—"मम्मी ! झगड़ा करने की जरूरत नहीं, ऊपर चलो।"

मोदी ने गोरी की तरफ़ संकेत करते हुए कहा—"यही वह लड़की है जिसे तुम सती कहते हो। देख लो, यह माँ बनने वाली है या नहीं।"

पास ही खड़ी हुई एक औरत ने कहा—"बात तो सच है मोदी।"

सोफ़िया लड़ने-मरने को तैयार थी, लेकिन गोरी उसे खींच कर ऊपर ले गई।

सोफ़िया ऊपर आकर रो पड़ी। बोली—"ओ गॉड दुनिया कितना बुरा है। किसी भी 'लेडी' को अच्छा नहीं समझता।"

गोरी ने कहा—"दुनिया बुरी नहीं मम्मी ! वे जो बात कह रहे हैं वह सच है।"

सोफ़िया ने चकित होकर कहा—"क्या सच है ?"

"वही, जो लोग कह रहे हैं।"

"क्या तुम 'मदर' बनेगा।" सोफ़िया थोड़ी देर तक मौन रही, फिर बोली—"हम तुमको बोला था तुम चन्द्रमोहन से शादी कर लो और तुम इन्कार हो गया। तुम बताओ वह कौन है ? उसका नाम बोलो।"

"तुम्हारा बेटा, यशपाल।"

"यशपाल ! यह कैसे होना सकता है ? वह तुमको किधर मिला ? कैसे मिला ? नहीं, नहीं तुम झूठ बोलता है।"

गोरी चकित होकर सोफ़िया की ओर देखने लगी। अब उसकी आँखों में आँसू आ गये।—"मम्मी ! तुम भी हमको झूठा समझता है ?"

सोफ़िया वहीं बैठी रही। लेकिन गोरी दूसरे कमरे में जाकर खूब रोई।

●

२६

●

मानव का मन प्रकृति ने कुछ ऐसा बनाया है कि उसके उलट-फेर का स्वयं मानव को भी पता नहीं चलता। कहते हैं—मनुष्य स्वभाव-वश चलता है; और स्वभाव बनता है वातावरण से। वातावरण हमें मिलता है समाज से!

सोफ़िया जिस मुहल्ले मे रहती थी, वह मुहल्ला ही उसका समाज था। और समाज मनुष्य को जैसा समझता है, वह वैसा बनने की चेष्टा करता है फिर धीरे-धीरे वैसा बन जाता है। सोफ़िया का समाज सोफ़िया को देवी और एक उच्चकोटि की नारी मानता था। किन्तु गोरी के कारण उसकी सारी महत्ता मिट्टी में मिल रही थी। गोरी के लिए उसके मन में वात्सल्य-भाव अवश्य था। इस मुहल्ले के लोगों और घर की दीवारों और उस वातावरण से उसका एक सम्बन्ध था, एक प्यार था। और वह गोरी के प्रति वात्सल्य से अधिक प्राचीन था।

सोफ़िया के मन में गोरी के प्रति एक दुःख, वेदना और घृणा उत्पन्न हो गई थी। वह दिन भर अपने कमरे के फर्श पर बैठी तड़पती रही। उसके मन को किसी प्रकार चैन नहीं आता था। उसकी दशा

उस सास की सी थी जिसकी कुलवधू समाज में कुलटा सिद्ध हो गई हो। क्या वह सास उस बहू को अपने घर में स्थान दे ?

इस विचारणीय प्रश्न पर सोफ़िया उठ खड़ी हुई। वह चाहती थी कि वह गोरी का हाथ पकड़ कर उसे घर से बाहर कर दे।

रात भींग चुकी थी। मुहल्ले में सन्नाटा था और गोरी के कमरे में अँधेरा।

कभी-कभी इस शून्य वातावरण में मुहल्ले के आवारा कुत्ते भौंक उठते या किसी मोटर के गुज़रने की आवाज़ उस निस्तब्धता को भंग कर देती थी।

सोफ़िया अपने कमरे से निकल कर बालकनी में आ गई। उसने गोरी के कमरे के ओर देखा, अन्दर अँधेरा था। फिर सोफ़िया कमरे के दरवाज़े पर आकर खड़ी हो गई और बोली—"तुम उधर जाओ उस आदमी के पास, जिनका तुम्हारे पास 'चाइल्ड' है।"

गोरी ने कोई उत्तर नहीं दिया।

सोफ़िया फिर क्रोधित स्वर में बोली—"हमारा में तुम्हारे वास्ते कोई जगह नहीं है।"

लेकिन जब फिर भी कोई उत्तर नहीं आया तो सोफ़िया ने कमरे की बत्ती जला दी। लेकिन वहाँ गोरी नहीं थी। सोफ़िया थोड़ी देर स्तब्ध खड़ी कमरे की दीवारों और सामानों को देखती रही।

यशपाल की शादी की रात का सजा हुआ कमरा अभी तक ज्यों-का-त्यों था, लेकिन वहाँ न तो यशपाल था और न गोरी।

सोफ़िया फर्श पर बैठ गई। आज उसे घर शून्य जान पड़ा, नहीं बल्कि सारा संसार शून्य जान पड़ा। उसका इस संसार में कोई नहीं! कोई नहीं था, कोई नहीं है, और कोई नहीं होगा।

*   *   *

चाचा ने यह कहते हुए फ्लैट का दरवाज़ा खोला—"यह आधी रात को कौन आ गया ?" फिर गोरी को देख कर उसने बरामदे की बत्ती बुझा दी और घुटे-घुटे स्वर में बोले—"यहाँ तुम किस लिए आई हो ? लोग तुम्हें सती-साध्वी समझते थे, इस मुहल्ले में तेरी बहुत इज्जत की जाती थी। यदि उन्हें मालूम पड़ जायगा तो तेरी क्या नाक रहेगी। और हमारे मुँह पर क्या कलंक नहीं लग जायगा ? जिसने तुझे गर्भ दिया, वही आसरा भी देगा।"

गोरी ने कहा—"उसका अपने पास भी आसरा नहीं है, मुझे कहाँ से आसरा देगा ? वह कायर पुलिस के डर से भटक रहा है।"

चाचा ने जाने क्या समझा ? बोले—"क्या वह कोई बदमाश है, क्रिमिनल है ? अरे···रे, तू कहाँ फँस गई ?"

गोरी ने कहा—"वह वही है, जिसे आपने अपराधी बनाया है, जिसके साथ आपने मेरा विवाह किया है।"

चाचा के मुख पर हँसी सी दौड़ गई। उसने धूर्त बूढ़े की तरह मुस्कुराते हुए कहा—"मैं तो तेरी इस झूठी बात पर विश्वास कर लूँगा गोरी, पर लोग इसे कैसे सच मान लेंगे ?"

गोरी थोड़ी देर उसके मुँह की ओर देखती रही, कुछ बोली नहीं। चाचा ने फ्लैट का दरवाज़ा बन्द कर दिया। अब गोरी के लिए दूसरा कौन सा स्थान है—वह सोचने लगी। उसे अपने लिए नहीं, अपने होने वाले बच्चे के लिए स्थान चाहिए था।

गोरी वहाँ से निकल कर चन्द्रमोहन के घर जा पहुँची, किन्तु वहाँ कोई नहीं था। घर पर ताला लगा हुआ था। वह वहाँ से निकल कर सड़क पर आ गई। आमतौर से भारत की नारियाँ इसी तरह सड़क पर आती हैं। सड़कों पर जो इस युग का कोलाहल है, कुछ नारियाँ उसमें बह जाती हैं और कुछ उसमें डूब कर अपने सत्य की रक्षा करती हुई मन को मैला नहीं होने देतीं।

सत्य की चादर लोगों के आरोप लगाने से तनिक भी मैली नहीं होती, किन्तु मन के लेश मात्र मैल से जन्म-जन्मान्तर के लिए कलंकित हो जाती है। सती की परीक्षा हर युग में इसी तरह होती आई है। इसी तरह होती रहेगी।

युग बदलता है, मनुष्य बदलता है, संसार की हर बात बदलती है, किन्तु सत्य कभी नहीं बदलता, कभी नहीं डिगता, कभी नहीं डोलता।

*　　　*　　　*

ब्रह्म-मुहूर्त में किसी ने सोफ़िया का दरवाज़ा खटखटाया। सोफ़िया ने समझा कि गोरी शायद फिर लौट आई है, उसने धीरे-धीरे जाकर किवाड़ खोल दिये।

सामने शंकर दादा खड़ा था। यशपाल उसके साथ था।

सोफ़िया का हृदय यशपाल को देखकर भर आया। वह उसको छाती से लगाते हुए रोकर बोली—"तुम तो बुरा निकला, तुम्हारा गोरी भी बुरा हो गया।"

यशपाल सोफ़िया के मुख की ओर देखने लगा, वह बोला—"सारा संसार बुरा हो सकता है मम्मी ! पर गोरी बुरी नहीं हो सकती।"

"तुम क्या बोलता मैन, उसका 'कैरेक्टर' 'लूज़' है। वह प्रेगनेण्ट हो गया है। आज वह हमारे घर से चला गया।"

"कहाँ चला गया मम्मी ?"

"हम नहीं जानता।"

यशपाल और कुछ प्रश्न पूछे बिना ही वहाँ से चला गया।

सोफ़िया उसके पीछे जाने के लिए एक कदम आगे बढ़ी, मगर शंकर दादा ने उसका हाथ पकड़ लिया और बोला—

"सिस्टर ! यशपाल उसे ही ढूँढ़ता हुआ आया है। यह पहले कायर था, पर अब गोरी ने इसको बहादुर बना दिया है। इसको जाना ही माँगता है। जब तक यह गोरी को नहीं मिलेगा, इसका मन को शान्ति नहीं आयेगा।"

यशपाल गोरी को चाचा के घर में भी ढूँढ़ने गया। बम्बई की सड़कों पर इधर से उधर भटकता रहा और अन्त में दुःखी होकर वह दादर स्टेशन पर आ बैठा। वह सोचने लगा, उसने जीवन का पहला सुख, पहला अनुभव, पहला प्यार पाया था' गोरी इसी स्टेशन पर उसे मिली थी। वह यही सोचता रहा। कई ाड़ियाँ आती रहीं और मुसाफ़िरों से लदकर आगे भी बढ़ गईं।

सूर्य ने जब पूर्व से अपनी किरणें लीं, और एक गाड़ी दादर स्टेशन के प्लेट-फार्म से बाहर निकली तो एकाएक ब्रेक लगाकर ड्राइवर ने गाड़ी रोक ली। लोग इधर-उधर से झाँकने लगे।

"क्या हुआ क्या हुआ" का शोर मचा।

यशपाल की विचारशृंखला भी टूट गई। यशपाल ने उधर देखा। दो सिपाही एक स्त्री को पकड़ कर घसीट रहे थे और कह रहे थे—"यह आत्म हत्या करने चली थी। यह अपराधी है।"

यशपाल ने उसे देखा। वह गोरी थी। वह आगे बढ़ गया और सिपाहियों से बोला—"अपराधी यह नहीं; अपराधी मैं हूँ।"

—और उसी दिन शाम के अखबारों में बड़े-बड़े अक्षरों में छपा—

'यशपाल ! जिसने ग़बन किया था
'जिसने जुए खाने खोले थे—
'जिसने शराब के धन्धे किये थे—
'जिसने चोरियाँ की थीं—

'उसने अपने आपको पुलिस के हवाले कर दिया है।'

२७

यशपाल ने सात बरस जेल में बिता दिये।

आज उसकी रिहाई का दिन है।

गोरी अपने सात बरस के बालक के साथ जेल के द्वार पर खड़ी उसका स्वागत कर रही है।

यशपाल ने गोरी की ओर देखा, और फिर अपने बालक को उठाकर सीने से लगा लिया और उसका मुँह चूम लिया। बालक के स्पर्श से यशपाल की सात वर्ष की पीड़ा एक क्षण में मिट गई।

गोरी का मन करुणा से भर गया, उसकी दोनों आँखों से दो अश्रु टपक पड़े। यह अश्रु वेदना के नहीं थे, संतोष के थे।

अब वह अपना घर बसायेगी, अपनी गृहस्थी को चलायेगी और सुख से अपना जीवन व्यतीत करेगी।

आप कहेंगे गोरी ने क्या पाया ?

मैं कहूंगा, संतोष ! वह संतोष, जिसके लिए आज सारा संसार व्याकुल हो रहा है और किसी को वह संतोष नहीं मिलता।

समाप्त